Con. 3. 5.10.47
750

अंक 5
संख्या 10

शुक्रवार
29 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	सदस्यों का शपथ ग्रहण करना	1
2.	हाउस कमेटी के सदस्यों का चुनाव	1
3.	विधान-मस्विदे की जांच-कमेटी	2
4.	विधान-परिषद् की कार्यवाही सम्बन्धी कमेटी की रिपोर्ट	28

भारतीय विधान-परिषद्

शुक्रवार, 29 अगस्त सन् 1947 ई.

माननीय डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी की अध्यक्षता में भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में प्रातःकाल दस बजे आरम्भ हुई।

सदस्यों का शपथ ग्रहण करना

निम्न सदस्य ने शपथ ग्रहण की:

लेफ्टी. कर्नल बृजराजनारायण (ग्वालियर)।

हाउस कमेटी के सदस्यों का चुनाव

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार: जनरल): श्रीमान् जी, मैं निम्न प्रस्ताव रखता हूं:

निश्चय किया जाता है कि यह विधान-परिषद् अपने नियम 44 (2) में दी गई विधि के अनुसार हाउस कमेटी के लिये दो सदस्य चुने।

श्रीमान् जी, जैसाकि आपको विदित है कि हमारे दो सदस्य श्री अब्दुलगफ्फारखां तथा श्री ए. के. दास जो कि इस कमेटी के सदस्य थे वे इस सभा के सदस्य नहीं रहे। नियमों के अनुसार वे हाउस कमेटी के भी सदस्य नहीं रहे। अतः दो खाली स्थान हैं जिनकी पूर्ति माननीय अध्यक्ष द्वारा निर्धारित विधि से की जायेगी।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** हाउस कमेटी में दो खाली जगहों के लिये आज सायंकाल के पांच बजे तक नामज़दगी होगी और यदि आवश्यकता हुई तो कल सायंकाल को 3 और 4 बजे के बीच कौंसिल भवन की पहली मंजिल में अन्डर सेक्रेटरी के कमरे में (कमरा नं. 25) आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर एकात्मक परिवर्तनीय मत द्वारा चुनाव होगा।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

विधान-मस्विदे की जांच-कमेटी

***श्री सत्यनारायण सिनहा:** श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

यह परिषद् निश्चय करती है कि परिषद् के कार्यालय में परिषद् में किये गये निर्णयों के आधार पर तैयार किये गये भारत के विधान के मस्विदे की जांच करने तथा उसमें आवश्यक संशोधनों का सुझाव रखने के लिए सर्वश्री–

(1) अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर,
(2) माननीय एन. गोपालस्वामी आयंगर,
(3) माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर,
(4) श्री के.एम. मुन्शी,
(5) सैयद मुहम्मद सादुल्ला,
(6) सर बी.एल. मित्तर और
(7) श्री डी.पी. खेतान की एक समिति नियुक्त की जाये।

श्रीमान् जी, आपको स्मरण होगा कि पिछली बार जब हम संघ-विधान तथा प्रान्तीय विधानों पर वाद-विवाद कर रहे थे, आपके सुझाव पर सभा ने यह स्वीकार किया था कि इस सभा में जो निर्णय हम करते हैं उनको उचित रूप-रेखा देने के लिये एक मस्विदा तैयार करने वाली समिति बनाई जाये। इस लक्ष्य को विचार में रखते हुए यह कमेटी नियुक्त की जा रही है। मैं आशा करता हूं कि सभा इन नामों को स्वीकार करेगी।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, एक वैधानिक आपत्ति है। जैसा कि आपको विदित है, श्री सैयद मुहम्मद सादुल्ला सदस्यता से हट गये थे और सिलहट के चुनाव के फलस्वरूप उनका अभी हाल ही में पुन: निर्वाचन हुआ है। उन्होंने अभी सदस्यों के रजिस्टर में हस्ताक्षर भी नहीं किये हैं और न सभा में अपना स्थान ग्रहण किया है। इसलिये मेरे विचार से उनको किसी समिति में चुने जाने का अधिकार प्राप्त नहीं है। श्रीमान् जी, क्या आप कृपा कर सभा को यह बतायेंगे कि जहां तक श्री सादुल्ला का सम्बन्ध है, प्रस्ताव वैधानिक है?

***अध्यक्ष:** रजिस्टर में हस्ताक्षर करने के पश्चात् वे कार्य प्रारम्भ करेंगे।

***बेगम ऐजाज़ रसूल** (संयुक्त प्रान्त: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, यद्यपि मैंने इस प्रस्ताव की सूचना नहीं दी है, मैं आपकी आज्ञा से यह पेश करना चाहूंगी

कि यह सभा माननीय अध्यक्ष को किसी भी अन्य व्यक्ति को समिति का सदस्य नामज़द करने का अधिकार प्रदान करती है, यदि कोई सदस्य जो उस समिति में नामज़द किया जा चुका है और किसी कारणवश भाग नहीं ले सकता है। मैं आशा करती हूं कि सभा मेरे इस संशोधन को स्वीकार करेगी और माननीय प्रधान को यह अधिकार प्रदान करेगी।

***अध्यक्षः** क्या आपने इस संशोधन की सूचना दी है?

***बेगम ऐज़ाज़ रसूलः** मैंने अभी कहा था कि मैंने विधिवत इस प्रस्ताव की सूचना नहीं दी है, लेकिन मैं आशा करती हूं कि सभा मेरे प्रस्ताव को कृपया स्वीकार करेगी।

***अध्यक्षः** मैं इस विषय पर थोड़ी देर बाद विचार करूंगा। इस अरसे में अन्य संशोधन पेश किये जा सकते हैं।

***माननीय श्री बी.जी. खेर** (बम्बईः जनरल): अध्यक्ष महोदय, जिस संशोधन की मैंने सूचना दी है वह इस विचार से रखा गया है कि वह प्रस्तावक महोदय श्री सत्यनारायण सिनहा के मन्तव्य को और भी अधिक स्पष्ट रीति से प्रकट करे और प्रभावित करे। वह इस प्रकार है किः

> ''परिषद् के कार्यालय में, परिषद् द्वारा किये गये निर्णयों को प्रभाव देने के लिये तैयार किये गये भारत के विधान के मस्विदे की जांच करना तथा उसमें आवश्यक संशोधनों के लिये सुझाव रखने के लिये' शब्दों के स्थान में निम्न शब्द रख दिये जायेंः
>
> 'परिषद् में किये गये निर्णयों को प्रभाव देने के लिये वैधानिक परामर्शदाता द्वारा तैयार किये गये भारत के विधान के मूल विषय के मस्विदे की जांच करना, मय उन सब विषयों के जो उसके लिये सहायक हैं या जिनकी ऐसे विधान में व्यवस्था करनी है और कमेटी द्वारा पुनरावलोकन किये विधान के मसविदे के मूल रूप को परिषद् के समक्ष विचारार्थ उपस्थित करना'।''

यह दो प्रकार की व्यवस्थायें रखता है। पहला परिषद् द्वारा किये गये निर्णयों को प्रभाव देने के आशय से वैधानिक परामर्शदाता मस्विदा तैयार करेंगे। उस मस्विदे की यह कमेटी जांच करेगी और श्रीमान् जी जो निर्णय हमने किये हैं उनसे सम्बन्ध

[माननीय श्री बी.जी. खेर]

रखते हुये समस्त प्रश्नों पर हमने विचार नहीं किया है और न उन पर विचार किया है जो कि बहुधा आवश्यक होते हैं और जिनको विधान में रखना चाहिये। उदाहरण के लिये, हमने एक सिद्धान्त निर्धारित किया है कि प्रान्तीय विधान में जो कुछ कार्यवाही करनी है वह गवर्नर के नाम से होगी। ऐसी बहुत-सी बातें हैं जिनको इस निर्णय के प्रभावान्वित करने के लिये रखना है, जिसको परिषद् ने निश्चय किया है और जिसको भारत सरकार के एक्ट में स्थान प्राप्त हो चुका है। ऐसी व्यवस्थायें हैं जो अन्य विधानों में सहायक रूप में हैं तथा कुछ अन्य व्यवस्थायें हैं जिनको बहुधा विधान में रखा जाता है। हमारे मस्विदे में इन सबको शामिल किया जायेगा, यद्यपि उन पर यहां अब तक वाद-विवाद या निर्णय नहीं हुआ हो। मैं इस संशोधन पर कोई लम्बा वक्तव्य देना नहीं चाहता हूं। हमारे लिये प्रत्येक आवश्यक विषय पर वाद-विवाद करना तथा उसका निर्णय करना सम्भव नहीं था। परन्तु उनके बिना विधान पूर्ण नहीं होगा। हमने लगभग सभी महत्वपूर्ण विषयों पर निर्णय कर लिया है। इनको प्रभाव दिया जायेगा, परन्तु मस्विदे में ऐसी बातें भी होंगी जो इनकी सहायक हैं और ऐसी भी बातें होंगी जो कि अन्य रूप में आवश्यक हैं। इन सब विषयों सहित मस्विदे को आवश्यक रूप से इस सभा के समक्ष वाद-विवाद तथा निर्णय के लिये रखना है। श्रीमान् जी, मैं आशा करता हूं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार करेगी।

***अध्यक्ष:** पहले उन संशोधनों पर विचार किया जायेगा जो प्रस्ताव के औचित्य पर हैं।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा:** श्रीमान् जी, मैं संशोधन को स्वीकार करता हूं।

***श्री ए.पी. पट्टानी** (पश्चिमी भारतीय-रियासतों का समूह): अध्यक्ष महोदय, मैं निवेदन करना चाहता हूं कि प्रस्ताव जो पेश किया जा रहा है, उसे छोटा कर देना चाहिये और केवल यह कह देना चाहिये कि वैधानिक परामर्शदाता को विधान का मस्विदा बनाने में सहायता देने के लिये यह समिति नियुक्त की जाये। मुझे इस बात पर आश्चर्य है कि विधान का मस्विदा बनाने के काम को क्या यह आवश्यक है कि इतनी बड़ी समिति को सौंपा जाये। यह बहुत अच्छा होगा कि वैधानिक परामर्शदाता को जो कि अनुभवी परामर्शदाता हैं, यह काम दे दिया जाये क्योंकि एकमात्र वही सम्पूर्ण विवरण से परिचित हैं। मस्विदा भागों में नहीं बनेगा वरन् एक प्रति में बनेगा। अत: वे सदस्य जिनको कमेटी में नियुक्त किया जाता है विधान बनाने में उनके (परामर्शदाता) सहायक होंगे तथा उन संशोधनों के आधार

पर जो यहां सभा द्वारा स्वीकार किये गये हैं विधान का मस्विदा बनाने में सहायक होंगे। अत: जांच करने इत्यादि के अतिरिक्त हाउस का केवल यह कहना आशय की अच्छे प्रकार से पूर्ति करेगा कि यह कमेटी वैधानिक परामर्शदाता को विधान का मस्विदा बनाने में सहायता करे।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास: जनरल): श्रीमान् जी, मैं भी पूर्व वक्ता द्वारा दिये गये सुझाव के पक्ष में हूं। यह ठीक नहीं है कि कार्यालय पर पूर्णतया कार्य सौंप दिया जाये, अफसर चाहे कितने ही कुशल क्यों न हों। हमने अनेकों विषयों पर निर्णय किये हैं जो कि हमारे समक्ष विधान के मस्विदे के रूप में रखे गये हैं। यह हमारे अधिकार की बात है कि हम विधान बनाने के लिये अग्रगण्य व्यक्तियों की समिति नियुक्त करें। ऐसी बहुत-सी बातें हैं जिनके मस्विदे में जो कि हमारे समक्ष रखा गया था, हमने संशोधन पेश किये हैं, अन्य बातों को स्वीकार किया है जो साधारणतया विधान में पाई जाती हैं और जो मान्य हैं तथा सूचियों पर भी हमें विचार करना है। उस अफसर के निर्णय पर जिसे इसे बनाना है, सूचियों को छोड़ना चाहे वे अच्छी हैं या बुरी गलत है। समय-समय पर हम सदस्यों से निर्देश प्राप्त करते रहे हैं। उदाहरण के लिये अनेकों बार माननीय अध्यक्ष महोदय ने सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर से पूछा है कि उनकी क्या राय है और इसी प्रकार अनेकों अन्य सदस्यों ने सहायता दी है। उनके पास सब संशोधन हैं जो कि रखे गये हैं। नि:सन्देह संशोधन विधिवत् पेश नहीं किये गये लेकिन उन पर विचार किया जायेगा। इसलिये मैं सुझाव रखता हूं कि यह समिति प्रस्तावित कानून का मस्विदा पेश करे जिस पर एक-एक वाक्यखण्ड को लेते हुए इस परिषद् द्वारा विचार किया जायेगा।

मैं इस प्रकार से माननीया सदस्या द्वारा रखे गये सुझाव से भी सहमत हूं कि यदि किसी सदस्य को आने की सुविधा न हो और कार्य रुक न सकता हो तो अध्यक्ष को ऐसे सदस्यों की जगह भरने तथा ऐसे अतिरिक्त सदस्य लेने (co-opt) का अधिकार होना चाहिये जो कि इस उत्तरदायित्व को संभालने के लिये उद्यत हों। श्रीमान् जी, यदि सभा स्वीकार करती है तो मैं यह अधिकार भी प्रधान के लिये चाहूंगा। दो या तीन सदस्यों का यह काम नहीं है कि वे सम्मिलित हों और पूर्ण उत्तरदायित्व का भार संभालें। उदाहरणार्थ, श्री सन्तानम् यहां इन विषयों में बहुत रुचि लेते रहे हैं। वे दिल्ली में ही रहते हैं। इन सज्जनों से उस दशा में उपस्थित होने की प्रार्थना करनी चाहिये, जब कि अन्य सदस्यों को उपस्थित

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

होने की सुविधा प्राप्त न हो। इसलिये प्रधान को सामान्य अधिकार सौंपने के सहित श्री खेर का संशोधन स्वीकार किया जाये।

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रास: जनरल): मैं श्री खेर के संशोधन का समर्थन करता हूं, लेकिन मैं कुछ महत्वपूर्ण विषयों के बारे में कुछ सूचना प्राप्त करना चाहूंगा। हमने कुछ सारयुक्त बातों पर अभी तक इस सभा में निर्णय नहीं किया है। उदाहरणार्थ, हमें अभी नागरिकता की व्याख्या, विधान परिवर्तन की पद्धति, संकटकालीन अधिकार तथा विधान के अर्थ-सम्बन्धी वाक्य-खण्डों पर निर्णय करना है। मैं अब यह जानना चाहूंगा कि यह कमेटी अभी से कार्य आरम्भ कर देगी या इसे जब तक कि हम अगले अधिवेशन में इन विषयों पर निर्णय कर चुकें तब तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। इसको स्पष्ट कर देना चाहिये, नहीं तो यह समिति शान्त बनी रहेगी और कुछ भी कार्य नहीं करेगी। मैं तो यह निवेदन करूंगा कि यह समिति समस्त वाक्य-खण्डों का मस्विदा बनाना आरम्भ कर दें। उनको उन विषयों को जिन पर निर्णय हो चुका है बिल्कुल स्पष्ट रखना चाहिये। दूसरे भाग बड़े छापे में या टेढ़े छापे (*इटैलिक्स*) में रखे जा सकते हैं जिससे कि जब हम यहां सम्मिलित हों, हम इन दो भागों के लिये भिन्न-भिन्न पद्धति ग्रहण करें। जहां तक उन भागों से सम्बन्ध है, जिन पर हम निर्णय कर चुके हैं, उनके केवल मौखिक भाग की जांच की जायेगी और सिद्धान्त के कोई सारयुक्त संशोधन स्वीकार नहीं किये जायेंगे। जहां तक उन भागों से सम्बन्ध है, जिनमें वे विषय हैं जिन पर निर्णय नहीं हुआ है, हम सिद्धान्तों पर भी संशोधन रखेंगे। अत: मेरे विचार से इस समिति को उस समय तक प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है जब तक कि हम उन विषयों पर निर्णय न कर चुकें जिन पर अभी तक निर्णय नहीं हुआ है।

वे एक प्रयोगात्मक मस्विदा बनायें और पूरा मस्विदा सभा के समक्ष लाया जाये। फिर हम उन भागों पर, जो निश्चित हो चुके हैं, मौखिक संशोधनों पर विचार करें और विधान के उन भागों पर जिन पर प्रथम बार नये रूप से विचार करना है हम सिद्धान्त के प्रस्ताव रख सकते हैं। इस प्रकार हम सभा का समय बचा सकते हैं। अन्यथा उन सब नई बातों पर विचार करने के लिये एक और अधिवेशन करने से सदस्यों को बहुत परेशान होना पड़ेगा। अत: मैं आशा करता हूं कि जब हम नवम्बर में सम्मिलित हों तब हमारे पास मय उन सब विषयों के जिन पर हमने निर्णय कर लिया है तथा अन्य विषय जिन पर अभी निर्णय नहीं किया

है, पूर्ण प्रस्तावित कानून का मस्विदा तैयार हो जिससे कि हम इस पद्धति को ग्रहण कर सकें। मैं आशा करता हूं कि यह मान्य होगा। श्री खेर के संशोधन की व्याख्या और अधिक स्पष्ट रूप में, जैसा कि मैंने बताया है, करनी चाहिये।

श्री सेठ गोविन्ददास (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): सभापति जी, मैं इस सम्बन्ध में जानना चाहूंगा कि एक बहुत बड़ा मसला अभी तक तय नहीं हुआ है और वह यह है कि हमारी भाषा क्या रहेगी। आपने यह कहा था कि जो विधान हम तैयार करेंगे, वह मूल में हमारी राष्ट्रीय भाषा में होगा और उसका अनुवाद चाहें तो अंग्रेजी में हो सकता है। तो मैं यह जानना चाहता हूं कि जो कमेटी बनाई जा रही है उस कमेटी के काम में हमारी कौन-सी भाषा रहेगी? इस पर भी विचार होगा या नहीं? दूसरी बात मैं जानना चाहता हूं कि जो बिल का मस्विदा हम तैयार कर रहे हैं वह जैसा आपने उस समय कहा था वह मूल में हमारी भाषा में होगा या मूल में अंग्रेजी में होगा? मैं यह सुझाव रखना चाहता हूं कि इन विषयों पर भी इस समय निर्णय हो जाना चाहिये और मूल में जो हमारा मस्विदा हो वह हमारी राष्ट्रीय भाषा में होना चाहिये। उसका अंग्रेजी अनुवाद हो सकता है। साथ ही हमारी कौन सी भाषा रहेगी, यह भी इस समय निर्णय हो जाना चाहिये।

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): अध्यक्ष महोदय, मैं कुछ बातें रखने के लिये खड़ा हुआ हूं, क्योंकि मेरे मित्र श्री सन्तानम् ने कुछ ऐसे सुझाव रखे हैं जो कि मुझको अवैधानिक प्रतीत होते हैं। श्री सन्तानम् ने कहा है कि मस्विदा तैयार करने वाली समिति का कार्य यह होना चाहिये कि वह इस प्रकार से मस्विदा तैयार करे कि उन वाक्यखण्डों को, जो हमारे निर्णय पर आश्रित हैं, पहचानने के लिये शेष वाक्यखण्डों से किसी भिन्न प्रकार से रखें। आगे उन्होंने यह भी कहा कि उन वाक्यखण्डों पर, जो कि हमारे यहां किये गये निर्णयों पर आश्रित हैं, केवल मौखिक संशोधन रखे जायें तथा इन वाक्यखण्डों में परिवर्तन करने के लिये कोई सारभूत संशोधन रखने की आज्ञा नहीं होनी चाहिये। मैं निवेदन करता हूं, श्रीमान् जी, कि इस प्रकार सभा के अधिकारों में कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सकता है (*वाह, वाह*)। वह एक ही बात है चाहे आप अब निर्णय करें। जब कि सारा मसविदा आपके समक्ष होगा तो उसे देखकर तो आपके लिये भी यह आवश्यक हो जाता है कि जो कुछ निर्णय आप कर चुके हैं उनको फिर से लें। मेरी राय से निश्चित प्रतिबन्ध वांछनीय नहीं है। मैं केवल इस विशेष बात पर आग्रह करने के लिये खड़ा हुआ हूं।

[श्री एम.एस. अणे]

दूसरी बात यह है कि एक ऐसा सुझाव रखा गया है कि अध्यक्ष को यह अधिकार होना चाहिये कि वे सूची में दिये गये नामों के अतिरिक्त जिसको चाहें नामजद करें। साधारणतया कोई व्यक्ति इस पर आपत्ति नहीं करेगा। हमने कुछ नाम देने का विचार क्यों किया, इसका प्रमुख कारण यह है कि इस प्रकार के विषय में हम अध्यक्ष महोदय को गहन उत्तरदायित्व से मुक्त करें। उनको बड़ी बुरी स्थिति में रखना होगा यदि दस आदमी उनके पास जायें और कहें ''मेरे ख्याल से मैं इस विषय के लिये बड़ा योग्य व्यक्ति हूं, अतः मेरा नाम वहां होना चाहिये''। यह अच्छा है कि सूची में जो नाम दिये गये हैं उनको स्वीकार कर लिया जाये। किसी व्यक्ति के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह सुझाव द्वारा समिति की सहायता करने के लिये कमेटी का सदस्य हो। अतः मैं उस विशेष सुझाव का विरोध करता हूं जो कि सदस्या ने रखा है और जिसका समर्थन मेरे माननीय मित्र श्री अनन्तशयनम् आयंगर द्वारा हुआ है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): अध्यक्ष महोदय, जैसा कि मैंने समझा है इस कमेटी का उद्देश्य उस कार्यवाही को लेकर तुरन्त ही कार्य आरम्भ करना है, जिसको इस सभा ने स्वीकार कर लिया है। जिसका आशय यह है कि संघ तथा प्रान्तीय विधानों से सम्बन्धित इस सभा ने जितने प्रस्ताव पास किये हैं उनको उचित रूपरेखा दी जायेगी, सिवाय उन विषयों के जैसे भाषा, नागरिकता और पहले भाग के सिद्धान्त जिनको अभी स्थगित रखना है। समिति इन विषयों पर वाद-विवाद नहीं कर सकती है जब तक कि इन अथवा अन्य विषयों पर, जिन पर कि अभी तक निर्णय नहीं किया गया है, सभा अगले अधिवेशन में पूर्ण रूप से वाद-विवाद न कर ले। परन्तु इससे कमेटी के कार्य करने में बाधा नहीं हो सकती है। अतः श्री सन्तानम् की आशंकायें विचारणीय नहीं हैं। इस कमेटी का उद्देश्य तुरन्त ही अपना कार्य आरम्भ कर देना है, अतः श्रीमान् जी, मैं निवेदन करता हूं कि श्री सन्तानम् को आशंका करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

दूसरे, जैसा कि श्री पट्टानी ने सुझाया है, मैं भी सोचता हूं कि एक विशेषज्ञ द्वारा विधान तैयार किया जा सकता है। मैं स्वयं यह सोचता हूं कि उसकी जांच करने के लिये तीन सदस्यों की समिति यथेष्ट होगी। जैसा कि कहा गया है कि कुछ सदस्य अनुपस्थित हो सकते हैं इसलिये सात सदस्यों का सुझाव रखा गया है। मैं इसके पक्ष में नहीं हूं कि अध्यक्ष महोदय से उन लोगों के स्थान में जो अनुपस्थित हों कोई और नाम देने के लिये कहा जाये। केवल तीन ही काफी

होते, पांच उससे भी अधिक संख्या है और सात और भी अधिक। अतः मैं महसूस करता हूं जैसा श्री खेर तथा श्री सन्तानम् ने बताया है कि किसी सदस्य की अनुपस्थिति के कारण स्थान रिक्त हो जाने पर अन्य किसी व्यक्ति को रखने का अधिकार अध्यक्ष को दिये बिना ही इन नामों को रखा जाये और नामों सहित श्री खेर के संशोधन को स्वीकार किया जाये।

***डा. बी. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, प्रस्ताव के शब्दों से जो अर्थ-बोध होता है उससे अधिक अर्थ व्यक्त हम नहीं कर सकते हैं, अतः जो कुछ श्री सन्तानम् ने सुझाया है उससे हम नहीं घबराये हैं। एक क्रियात्मक राजनीतिज्ञ होने के नाते वे आशा करते हैं कि जो प्रस्तावित कानून तैयार हो वह पूर्ण हो तथा कुछ अंशों में पूर्ण और कुछ अंशों में अपूर्ण नहीं हो सकता और इसीलिये वे सोचते हैं कि प्रस्तावित कानून पूर्ण हो। जब वह पूर्ण रूप में तैयार हो जायेगा तब उनका सुझाव प्रयोगनीय होगा। प्रस्तावित कानून पूर्ण रूप में तैयार होगा या नहीं तथा उनके सुझाव को प्रयोग में लाने दिया जाये या नहीं—यह वाद-हेतु है जिस पर हमें विचार करना है। यदि उनके सुझाव को स्वीकार किया जाता है तो इससे पूरी सभा के अधिकार छीनने का आशय होगा और उपसमिति को एक प्रकार की विधान-परिषद् का प्रतिनिधित्व प्राप्त समिति बनाना होगा—एक ऐसा कार्य जो किसी प्रकार भी वांछनीय नहीं है। जैसा कि श्री सन्तानम् ने स्वयं निश्चित रूप से बयान किया है कि संघ-विधान-कमेटी के पहले तीन परिच्छेद और उसीके अन्तिम दो परिच्छेद तथा संघीय, प्रान्तीय और सहगामी तथा संघ-अधिकार-समिति की संघ-सूची का अच्छा-सा आधा भाग ये सब मिलकर एक बड़ा मोटा भाग बनते हैं, जिसको छोड़ दिया गया है और जिस पर अभी समस्त सभा द्वारा विचार करना है। उदाहरण के रूप में संघ-विधान-समिति तथा अनुकरणीय प्रान्तीय विधान समिति की एक संयुक्त बैठक हुई, जिसमें भाषा-आधार पर प्रान्तों के लिये एक उप-समिति नियुक्त की गई और इन दोनों समितियों की एक संयुक्त समिति ने उसकी सिफारिशों पर विचार किया है। इसके बाद उसका क्या होगा? क्या वह त्रिशंकु के समान हवा में लटका रहेगा, न स्वर्ग में न पृथ्वी पर? क्या उसको छोड़ दिया जाये? मैं यह सब एक उदाहरण के रूप में रख रहा हूं न कि इसलिये कि मैं इस विषय पर किसी प्रिय सिद्धान्त के पक्ष का समर्थक हूं। इस विषय को उदाहरण के रूप में मानना चाहिये। मैं पूछता हूं ''जब 6 नवम्बर को इस परिषद् का पुनः अधिवेशन होता है तो वह किस आशय से है? क्या उसके सामने पूर्ण विवरण सहित समूचा प्रस्तावित कानून रखा जायेगा और तब

[डा. बी. पट्टाभि सीतारमैया]

वह उस पर विचार करेगी?'' इस हालत में उसमें ऐसे भाग भी होंगे जिन पर प्राथमिक रूप में इस सभा द्वारा विचार ही नहीं किया गया हो। यदि ऐसा नहीं है तो नवम्बर के छठे अधिवेशन में छूटे हुये विषयों पर विचार करना होगा और उस हालत में उस समय तक प्रस्तावित कानून तैयार नहीं हो सकता है। यह वह कठिनाई है जो तर्क के आधार पर स्वयं मेरे सामने उपस्थित होती है। अतः मैं अध्यक्ष महोदय से निवेदन करूंगा कि वे स्थिति को स्पष्ट करें और यदि सम्भव हो सकता है तो उन समस्त विषयों को पूर्ण करने के लिये, जिन पर कि अभी तक विचार नहीं किया गया है, इस सभा का अधिवेशन सितम्बर या अक्टूबर के महीने में बुलायें। और तब जो सामग्री मस्विदा बनाने वाले या मस्विदा-समिति या जांच-समिति को दी जायेगी, वह यथेष्ट तथा पूर्ण होगी और तभी वे इस विषय को ले सकेंगे। मैं इस सुझाव को इसलिये रख रहा हूं कि जो कुछ किया जायेगा उसका स्पष्ट विचार हमारे सामने हो और यदि सम्भव हो सके तो कार्य समाप्त करने के हेतु उन विषयों पर, जिनको छोड़ दिया गया है, विचार करने के लिये सितम्बर या अक्टूबर में अधिवेशन बुलाने के लिये अध्यक्ष महोदय से अनुरोध करें।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र** (पश्चिमी बंगालः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री खेर द्वारा पेश किया गया संशोधन बड़ी सावधानी से विचार करने योग्य है, तथा इस सिलसिले में जो बातें श्री सन्तानम् ने रखी हैं उनकी भी सूक्ष्म जांच करनी चाहिये। मुझे विश्वास है कि इस सभा के अनेकों सदस्यों को अभी यह बात बिल्कुल स्पष्ट नहीं हुई है कि अगले अधिवेशन में क्या होगा। श्री सन्तानम् कहते हैं कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट के एक भाग को अभी सभा ने लिया ही नहीं है। यह कोई नहीं जानता कि सभा उसे उसी रूप में स्वीकार करेगी या उसमें कुछ परिवर्तन करेगी। उन्होंने ऐसा सुझाव रखा था कि उन निर्णयों का, जो सभा द्वारा कर लिये गये हैं, मस्विदा बनाया जायेगा तथा सदस्यों को यह अधिकार होगा कि यदि आवश्यक हो तो वह उनमें छोटे-छोटे मौखिक परिवर्तन कर दे। मैं सभा को यह बताना चाहता हूं कि यह साधारण कानून-निर्माण का विषय नहीं है अथवा तत्सम्बन्धी कानून-निर्माण करने का विषय नहीं है जिसको एक व्यवस्थापिका बनाती है। आप स्वतंत्र भारत के लिये विधान के एक्ट बना रहे हैं, अतः आपमें से प्रत्येक का यह उत्तरदायित्व ही नहीं वरन् आवश्यक कर्तव्य है कि आप विधान-एक्ट की प्रत्येक व्यवस्था की सूक्ष्म जांच करें और स्वयं संतुष्ट

हो जायें कि वह राष्ट्र की आवश्यकता के अनुरूप है। यदि आप इस सभा के सदस्यों के अधिकारों में रुकावट डालेंगे और उन्हें केवल मौखिक परिवर्तन ही करने देंगे तो मेरे विचार से आप इस सभा तथा देश के साथ भी बड़े से बड़ा अन्याय करेंगे। ऐसा हो सकता है कि जब पूर्ण चित्र सभा के समक्ष उपस्थित किया जायेगा तो उन निर्णयों के आधार पर जिनको हम इस अरसे में तय करते हैं वह कुछ भाग में या प्रस्तावित कानून के कुछ वाक्यखण्डों में उग्र परिवर्तन करने के लिये प्रेरित हो सकती हैं। आप पहले से ऐसा कैसे कह सकते हैं कि जो मस्विदा आपके सामने आयेगा, आप उसमें केवल रस्मी या मौखिक परिवर्तन ही कर सकेंगे? क्या श्री सन्तानम् गम्भीरतापूर्वक यह सुझाव रखते हैं कि चूंकि संघ-अधिकार-समिति तथा अन्य समितियों की रिपोर्टों के सम्बन्ध में हमने कुछ सिद्धान्तों को इस सभा में स्वीकार कर लिया है इसीलिये वह एक स्वीकृत सिद्धान्त के समान प्रयोग में लाया जायेगा कि उन पर फिर विचार नहीं किया जा सकता है तथा किसी सदस्य को यह अधिकार नहीं है कि वह उन पर फिर विचार करे या स्वयं कानून की या स्वयं विधान की आवश्यकता के लिये उपयुक्त बनाने के लिये ऐसे परिवर्तन करे कि वह शेष व्यवस्थाओं के साथ रखने योग्य हो जाये? यदि उनके ये विचार हैं तो मैं उनसे प्रत्यक्ष रूप में विरोध करूंगा। मैं इस विषय पर आवश्यकता से अधिक जोर नहीं देना चाहता हूं कि आप देश के विधान एक्ट का निर्माण कर रहे हैं।

इसके पश्चात् श्रीमान् जी, मैं अपने माननीय मित्र श्री खेर के इस कथन से पूर्णतया सहमत हूं कि मसविदा बनाने का कार्य कुछ उत्तरदायी व्यक्तियों को सौंपा जाना चाहिये, क्योंकि रसोइयों की अधिक संख्या भोजन को बिगाड़ देती है और इन उत्तरदायी व्यक्तियों को यह विशिष्ट कार्य सौंपा जाये कि वे यह देखें कि अब तक जो निर्णय किये गये हैं वे सब, उन परिवर्तनों के सहित जो कि सुझाये गये थे, प्रस्तावित कानून में वास्तविक रूप में शामिल किये गये हैं। अध्यक्ष महोदय, मैं आपसे यह पूछना चाहता हूं कि आप हमें यह बतायें कि जब कानून का मस्विदा तैयार हो जायेगा और विधिवत् सभा के समक्ष विचारार्थ उपस्थित किया जायेगा तो आप इस सभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित एक जांच-समिति (Select Committee) बनायेंगे या नहीं जिसमें सब विभागों का प्रतिनिधित्व हो (सब विभागों से मेरा आशय रियासतों से भी है), और जो उस पूरे प्रस्तावित कानून का अध्ययन करे और उसकी जांच करे जो कि सभा के सामने विचारार्थ रखा जायेगा। मेरी राय में समस्त विषय पर विचार करने के लिये तथा विधान-एक्ट की प्रत्येक व्यवस्था की बड़ी

[पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र]

सावधानी तथा तत्परता से जांच करने के लिये एक समिति नियुक्त नहीं की जायेगी, तब तक मुझे विश्वास है कि हमें संतोषजनक फल प्राप्त नहीं होगा। हमें इस बात को नहीं भूल जाना चाहिये कि एक बार विधान-एक्ट पास हो जाने पर उसमें चार, छः महीने या एकाध वर्ष तक भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। अतः हमें बहुत सावधानी तथा तत्परता से कार्य करना चाहिये जिससे हम उसे इतना निर्दोष बना सकें जितनी मनुष्य की सामर्थ्य है। मैं जानता हूं कि कोई मानवी संस्था पूर्ण नहीं है। लेकिन जहां तक हो सके हम पूर्ण सावधानी से देखें कि हमारा बनाया हुआ विधान-एक्ट यथासम्भव निर्दोष है। हम अपने निर्णय को उस समय तक स्थगित कर देंगे जब तक कि विधान-एक्ट की समस्त व्यवस्थाओं से सन्तुष्ट न हों। अतः भारतीय विधान पर अपनी स्वीकृति की अन्तिम मुहर लगाने से पूर्व मैं आपसे निवेदन करता हूं कि आप इस पर सावधानी से विचार करें कि आप इस बात पर हठ करेंगे या नहीं कि प्रस्तावित कानून के उपस्थित करने के लिये समस्त प्रस्तावित कानून की तथा उसकी सब व्यवस्थाओं की सावधानीपूर्वक जांच करने के लिये एक जांच-समिति होनी चाहिये और जब कि जांच-समिति की रिपोर्ट सभा के सामने आये तब आपको प्रस्तावित कानून की प्रत्येक धारा पर सावधानीपूर्वक वाद-विवाद करने का अन्तिम अवसर मिले। व्यक्तिगत रूप से मैं यह अनुभव नहीं करता हूं कि हमें अभी इतनी तीव्र गति से विधान के मस्विदे बनाने के कार्य को आरम्भ करने की आवश्यकता है जब कि हम उन नियमों को लागू कर रहे हैं जिनके द्वारा यह विधान-परिषद् व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करेगी। व्यवस्थापिका का कार्य करते हुये यह सभा सावधानी से विधान-एक्ट की व्यवस्थाओं की जांच कर सकती है।

उन भागों के सम्बन्ध में जो छोड़ दिये गये हैं, मैं सुझाव रखूंगा कि यदि यही हठ है कि नवम्बर के अधिवेशन तक पूरा मस्विदा इस सभा के सामने आ जाये, तो मस्विदा बनाने वाले इस धारणा को लेकर अग्रसर हो सकते हैं कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट के उस भाग के लिये जिस पर अभी तक सभा द्वारा वाद-विवाद नहीं हुआ है या जो छोड़ दिया गया है, सभा की स्वीकृति है। यदि हम यह अनुभव करते हैं कि संघ-अधिकार-समिति की सिफारिशें अन्त में सभा की स्वीकृति प्राप्त नहीं कर सकेंगी तो हम उनमें परिवर्तन कर देंगे और यदि बाद में सिद्धान्त स्वीकार नहीं हुये तो उसी के अनुसार मस्विदे में भी परिवर्तन कर दिया जायेगा। अतः मैं अपने माननीय मित्र डा. पट्टाभि सीतारमैया से सहमत नहीं हूं कि जो कार्यक्रम हमारे सामने रखा गया था उसे समाप्त करने के लिये एक मध्यवर्ती अधिवेशन की आवश्यकता होगी। मेरे ख्याल से इस विषय पर विचार करने के लिये सितम्बर के पूरे माह में परिषद् का अधिवेशन बुलाना सम्भव नहीं

होगा। मैं यह कहूंगा कि नवम्बर के अधिवेशन में सबसे पहले उन भागों पर विचार किया जाये जो कि छोड़ दिये गये हैं और जिनको अन्त में एक साथ रखा जा सकता है। किसी प्रकार भी देश का विधान कोई साधारण विषय नहीं है तथा इस पर साधारण ध्यान नहीं दिया जा सकता है। अतः श्रीमान् जी, मैं निवेदन करूंगा कि आप सभा को यह स्पष्ट बता दें कि हम किस प्रकार अग्रसर होना चाहते हैं। जहां तक मेरा सम्बन्ध है मैं यह नहीं जानता कि मैं यहां अपने माननीय मित्रों के विचारों के अनुरुप कह रहा हूं, लेकिन मैं यह सोचता हूं कि विधान का अन्तिम मस्विदा विधान-परिषद् के सदस्यों के पास उस पर विचार करने में कम से कम तीन सप्ताह पूर्व पहुंच जाये। यदि आप मस्विदे की व्यवस्थाओं को सावधानीपूर्वक पढ़ने तथा जांच करने के लिये यथेष्ट समय नहीं देंगे तो आपको यहां बहुत ही अधिक समय लगेगा। आप संशोधनों की बाढ़ को नहीं रोक सकेंगे जोकि सब दिशाओं से आयेगी, यदि आप सदस्यों को यथेष्ट समय नहीं देंगे। मैं समझता हूं कि देश के विधान के मस्विदे की जांच करने के लिये तीन सप्ताह का समय बहुत अधिक नहीं है। मेरा आशय यह है कि मस्विदा तैयार किया जाये और अधिवेशन से कम से कम तीन सप्ताह पूर्व सदस्यों में घुमा दिया जाये। यदि आप ऐसा कर सकते हैं तब तो माननीय सदस्य पूरी तैयारी करके आयेंगे और भिन्न-भिन्न वाक्य-खण्डों पर जो संशोधन होंगे वे सम्भवतः इतने अधिक न होंगे, जितने कि वे उस समय होंगे जब कि प्रस्तावित कानून का शीघ्रता में मस्विदा तैयार किया जायेगा और अधिवेशन आरम्भ होने के थोड़े दिनों पूर्व ही वह सदस्यों में घुमाया जायेगा। श्रीमान जी, मैं आपके कार्यालय पर कोई आक्षेप नहीं कर रहा हूं वरन् केन्द्रीय व्यवस्थापिका विभाग के अपने अनुभव के आधार पर मैं यह कह सकता हूं कि आपका कार्यालय आधा भी उतना निपुण नहीं है जितना कि केन्द्रीय व्यवस्थापिका का। यही सब कुछ हम उस तरीके में देखते हैं जिसके द्वारा कागज़, दैनिक आज्ञा-पत्र हमको घुमाये जाते हैं। विधान के मस्विदे के भेजने के प्रश्न पर यदि हमारे सामने ये बहाने आये कि ''समय की कमी'' या ''हमने आपके पते से भेज दिये'' या ''हम न भेज सके'' इत्यादि; तो यह दुखदायी होगा। अतः मैं कहूंगा कि इस बात पर ध्यान देने की बड़ी आवश्यकता है कि ये मस्विदे हमारे पास समय में पहुंचा दिये जायें।

तत्पश्चात् श्रीमान् जी, मैं निवेदन करूंगा कि यह आपका काम होगा कि इस सभा के अन्य प्रमुख सदस्यों की राय लें और विचार करें कि आप इस मस्विदे के एक-एक वाक्यखण्ड पर सभा द्वारा विचार करने के पूर्व समस्त प्रस्तावित कानून को देखने के लिये एक जांच-समिति की नियुक्ति ठीक समझते हैं या नहीं। जब तक यह नहीं किया जायेगा हम अपने आपको अन्धकूप में गिराने से नहीं बचा सकते हैं।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास: जनरल): श्रीमान् जी, ऐसे विषयों पर यह भी ठीक है कि हमें यह विश्वास है कि प्रस्ताव का वास्तविक अर्थ क्या है। एक बात को स्पष्ट कर देना चाहिये अर्थात् जिन निर्णयों को किया जा चुका है वे निश्चित समझे जायेंगे। यदि उनमें कोई त्रुटियां पाई जाती हैं या अनजानी कठिनाइयां उपस्थित होती हैं तो उन निर्णयों पर फिर गौर करने का अधिकार सभा को सदैव रहेगा। साधारण प्रस्तावित कानून के सम्बन्ध की जांच-समिति की उपमा देना जिसको सरकार ने प्रचलित किया है भ्रमात्मक है। सभा की कुछ समितियों द्वारा विभिन्न विषयों पर विचार करने के लिये हमने लगभग एक वर्ष ले लिया है। मौलिक-अधिकार-समिति, संघ-अधिकार-समिति तथा संघ-विधान-समिति बन चुकी हैं और उन्होंने विचार कर अपने निर्णय इस सभा के समक्ष रखे हैं। उन विषयों के लिये जिन पर परिषद् द्वारा विचार हो चुका है और जिन पर निर्णय किया जा चुका है, बाद में पुन: विचार करने के लिये क्षेत्र को स्वभावत: संकुचित कर देना चाहिये। परिषद् का हवाला दिये बिना सरकार द्वारा साधारण प्रस्तावित कानून पेश करने की उपमा भ्रमात्मक है। सरकारी विभाग व्यवस्थापिका को हवाला दिये बिना प्रस्तावित कानून तैयार करती है और उसको व्यवस्थापिका के सामने रखती है। फिर सभा एक जांच-समिति नियुक्त करती है। यदि आप समस्त विषय को उस मस्विदे के समान लें और विभिन्न महत्वपूर्ण विषयों पर जो निर्णय किये हैं उनका हवाला न दें और यदि एक-एक वाक्यांश लेकर उस पर तर्क करें तो मेरे विचार से यह उस पर फिर से विचार करने के समान होगा। इस प्रकार तो सदैव पद्धति का आरम्भ करना होगा और सभा में आरम्भ की गई पद्धति का अन्त कभी नहीं होगा। मेरे विचार से यह भी ठीक है कि यह स्पष्ट कर दिया है कि जिन विषयों पर निर्णय नहीं किया गया है वे एक भिन्न आधार पर स्थित हैं।

लेकिन मेरे मित्र श्री सन्तानम् ने जो सुझाव रखा है उसके कारण कठिनाई उपस्थित होती है कि यह समिति अन्य प्रकार की व्यवस्थाओं पर विचार करे जिन पर कोई निर्णय नहीं हुआ है। मैं यह नहीं कहता कि सभा का यह अधिकार नहीं है कि वह पूरे निर्णय पर पुन: विचार नहीं कर सकती है, परन्तु लगभग आठ या दस महीने तक जो काम हुआ है उसकी कुछ अन्तिम दशा होनी चाहिये जिससे कि हम समितियों द्वारा पेश की गई रिपोर्टों की, एक वाक्यखण्ड के पश्चात् दूसरे वाक्यखण्ड पर परिषद् के तर्क की तथा मतदान की, जो कि इस सभा में लिया गया, उपेक्षा करते हुये फिर से आरम्भ न करें, जिस प्रकार कि एक

साधारण प्रस्तावित कानून आरम्भ किया जाता है। मैं नहीं जानता हूं कि सभा की इच्छा यह है कि यह कमेटी समस्त विषयों पर विचार करे। जो धारायें इस सभा द्वारा निर्णय के विषय नहीं बनी हैं उनका विषय दूसरा है। किसी प्रकार भी उन मामलों में कुछ भेद रखना चाहिये जिन पर इस सभा में कल, परसों तथा सभा के समस्त विभिन्न अधिवेशनों में निर्णय किया है। हमने एक-एक वाक्यखण्ड पर विचार किया है और इस सभा-भवन में बड़े लम्बे तथा परिश्रम द्वारा तर्क रखे गये हैं। हमारे ऊपर जनता का कर्तव्य भार है कि हम उनको यह अनुभव करायें कि यह सब समय व्यर्थ गंवाया हुआ न समझा जाये। केवल यही विषय है जिसे मैं स्पष्ट करना चाहता हूं।

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि मैं श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर या आयंगर के भाषण और सुझाव से सहमत होने का अपना मार्ग नहीं पाता हूं। मुझे भय है कि मैं उनके लम्बे नाम का सही-सही उच्चारण नहीं कर सकता हूं, लेकिन चाहे वह अय्यर हों चाहे आयंगर, इसमें कोई अन्तर नहीं है। किसी भी सूरत में उनको पूर्व वक्ता ठीक-ठीक कहा जा सकता है। उनका सुझाव यह है कि जो समय हमने इस सभा में खर्च किया है, उसको व्यर्थ नहीं खोना चाहिये। परन्तु श्रीमान् जी, यह वह महत्वपूर्ण कानून-निर्माण है जिसको सरलता से कभी नहीं बदला जा सकता और इस सभा में हम जो कुछ पद्धति निर्धारित करेंगे उसका संशोधन करना बड़ा कठिन होगा। हमें इस बात पर भी विचार करना होगा और जैसा कि हमारे बहुत से मित्रों ने निश्चय कर भी लिया है कि हमारे यहां रियासतों के प्रतिनिधियों की एक बहुत बड़ी संख्या आने को है। हम सब जानते हैं कि रियासतें भारत में अनुदार दल वाली हैं और वे अवश्य किसी परिवर्तन के विरोध में अपना प्रभाव डालेंगी। यह पूर्णतया निश्चित है कि यदि हम विधान में संशोधन करने का प्रयत्न करेंगे तो वे उसमें परिवर्तन करने की अपेक्षा उसे रखने के पक्ष में होंगे।

इसके अलावा श्रीमान् जी, वह ठीक स्थिति क्या है जिसमें आज हम हैं? सर अल्लादी या श्री अल्लादी ने कहा कि हमने इस काम पर एक वर्ष बिता दिया है। मुझे भय है श्रीमान् जी, कि यह अक्षरश: सत्य नहीं है। सबसे पहले हम दिसम्बर में सम्मिलित हुये। उस समय क्या कार्यवाही की गई? बहुत कम। उस अधिवेशन में हमने जो कुछ काम किया वह विशेषकर क्रियात्मक लाभ को विचार में रखते हुये बहुत अधिक नहीं था। इसके बाद हम जनवरी में बैठे, पर वह भी छोटा-सा अधिवेशन था। हमने केवल इस परिषद् का लक्ष्य-मूलक प्रस्ताव पास

[डा. पी.एस. देशमुख]

किया। सच बात तो यह है कि यदि हम सावधानी से कार्यवाही तथा अपने काम के रिकार्ड की ओर ध्यान दें तो हमें विदित होगा कि जो कुछ हमने अब तक किया है, वह मेरी तुच्छ राय में बड़ी असावधानी से किया हुआ सा काम है। हमने अनेकों समितियां बनाई लेकिन अधिकतर हमें अन्त:कालीन रिपोर्टें, अस्थायी सुझाव, प्रयोगात्मक प्रस्ताव तथा इसी प्रकार की चीजें प्राप्त हुई। इस प्रकार के कामों को हम करते रहे। अभी तक हमारे पास विधान का पूर्ण चित्र नहीं है। सच तो यह है कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट के महत्वपूर्ण परिच्छेदों पर अभी निर्णय करना है। फिर हम यह किस प्रकार कह सकते हैं कि हमारे पास विधान का ढांचा है। मैं कहता हूं कि अभी हमारे सामने विधान का ढांचा भी नहीं है। अत: केवल यही उचित है कि हम एक वृहद् समिति बनायें, जिसमें इस सभा के सब विभागों के सदस्य हों, जिसमें इस सभा के बड़े-बड़े विद्वान तथा कार्यकुशल व्यक्ति हों जो कि विधान के ढांचे पर ध्यान दें। ऐसा अवसर न देना तथा कानून-निर्माण कार्य को शीघ्रता में विधान-निर्माण-कार्य के समान करना बहुत अनुचित होगा। श्रीमान् जी, मैं आशा करता हूं कि जो सुझाव श्री सन्तानम् ने रखा है जिसका समर्थन श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने किया है वह सभा द्वारा स्वीकार नहीं किया जायेगा तथा इसका विरोधी सुझाव, जो कि मेरे अन्य मित्रों ने रखा है तथा जिसका समर्थन श्री अणे ने किया है सभा द्वारा स्वीकार किया जायेगा।

जैसा मैंने पहले कहा था कि हम विधान को खण्ड-रूप में लेते चले आ रहे हैं और जब तक कि हमारे सामने उसका पूरा चित्र न हो तब तक यह न समझ लेना चाहिये कि सभा किसी प्रकार भी वचन-बद्ध हो गई है। हां, कुछ विषयों में, जैसे कि अल्पसंख्यक समिति की रिपोर्ट, सब लोग सहमत थे और उन पर किये गये निर्णयों को नहीं बदला जा सकता। परन्तु ऐसी भी अनेकों सहायक बातें हैं तथा वे बातें हैं जो मुख्य विषय पर आश्रित सही अनुमान के रूप में उत्पन्न हो जाती हैं। यह उचित तथा ठीक है कि उन पर नये सिरे से निर्णय करना चाहिये। यह नहीं मान लेना चाहिये कि जो निर्णय इनके सम्बन्ध में किये जा चुके हैं वे अपरिवर्तनशील हैं। वे सरलतापूर्वक परिवर्तनशील होने चाहियें जब तक कि हमारे सामने पूर्ण चित्र न आये और जब तक कि हमें विधान के अन्तर्गत प्रत्येक सिद्धान्त, प्रत्येक धारा तथा प्रत्येक शब्द पर वाद-विवाद करने का उचित अवसर न मिले तब तक हमारे किसी निर्णय को किसी प्रकार भी अपरिवर्तनशील नहीं मानना चाहिये।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार: मुस्लिम): मैं श्री सत्यनारायण सिनहा के प्रस्ताव का विरोध करता हूं। मेरी राय से इस दशा में समिति नियुक्त करना गलत होगा।

मैं खण्ड रूप से कार्य किये जाने में विश्वास नहीं करता हूं। मेरे विचार से हमारे खुद के हित के लिये यह बहुत अच्छा होगा कि हम यहां जब तक बैठक करें तब तक कि पूरी रिपोर्ट पर विचार समाप्त न कर लें। मैं समझता हूं कि रिपोर्ट पर विचार समाप्त करने में 15 दिन से अधिक नहीं लगेंगे। यदि हम अब से काम करते चले जायें तो मेरे ख्याल से 12 सितम्बर तक हम कार्य समाप्त कर देंगे। यदि कुछ कारणवश अन्यत्र काम में लगी रहने के कारण सरकार ऐसा करने के लिये उद्यत नहीं है तो हम कुछ दिनों के लिये स्थगित करें, फिर सम्मिलित हों और जो काम हमने अपने हाथों में लिया है उसे समाप्त करें। जब सब रिपोर्टें समाप्त हो जायें तब हम एक समिति नियुक्त करें और लगभग तीन महीने के लिये स्थगित करें। मेरे विचार से सब चीजों की जांच करने तथा प्रस्तावित कानून के रूप में रिपोर्ट पेश करने के लिये समिति को लगभग दो महीने लग जायेंगे। इसके बाद प्रस्तावित कानून पर विचार करने के लिये एक महीना हमें लग जायेगा और फिर हम प्रस्तावित कानून पर विचार करने के लिए परिषद् में आ सकते हैं। अतः मैं कहता हूं कि हम सितम्बर के अन्त अथवा मध्य तक काम करते रहें और इस रिपोर्ट पर विचार समाप्त करें। मान लीजिये कि हम सितम्बर के अन्त तक कार्य करते हैं तो हम अक्टूबर, नवम्बर तथा दिसम्बर के लिये स्थगित हो सकते हैं और फिर जनवरी में सम्मिलित हो सकते हैं और जब तक काम कर सकते हैं तब तक कि यह समाप्त न हो। मेरे ख्याल से यदि हम जनवरी और फरवरी में दो माह तक बैठें तो फरवरी के अन्त तक हम कार्य समाप्त कर सकेंगे। तीन महीने तक हम संघ-पार्लियामेंट के सदस्य की हैसियत से यहां ठहर सकते हैं। इन तीन महीनों में कुछ समय इस प्रकार व्यतीत किया जा सकता है। इसके पश्चात् हम मार्च के आरम्भ से मार्च के अन्त या अप्रैल के मध्य तक केन्द्रीय व्यवस्थापिका के बजट-अधिवेशन में बैठ सकते हैं। श्रीमान् जी, मैं सोचता हूं कि सुचारू रूप से कार्य करने के लिये यह अच्छा होगा कि हम अब कार्य प्रचलित रखें और रिपोर्ट पर विचार करने के कार्य को पूर्णतया समाप्त करके एक समिति नियुक्त करें। मैं श्री सत्यनारायण सिनहा के मूल प्रस्ताव का विरोध करने के लिये यहां आया हूं।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, विधान-निर्माण-कार्य गत आठ या नौ महीने से चल रहा है। अनेकों विषयों पर विचार करने, प्रान्तों तथा केन्द्र के विधान की सिफारिश करने के लिये इस परिषद् ने कुछ समितियां नियुक्त कीं और कुछ विशेष विषयों—जैसा कि संघ के अधिकार,

[श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर]

अल्पसंख्यकों के अधिकार, मौलिक अधिकार इत्यादि-पर कुछ समितियां नियुक्त कीं। इन समितियों ने उन अनेकों विषयों पर, जो उनके हवाले किये गये थे, विचार करने के पश्चात् बड़ी सावधानी तथा जांच के उपरान्त उन्होंने अपनी रिपोर्ट परिषद् में रखीं। रिपोर्टों के अधिक भाग पर इस परिषद् में वाद-विवाद हो चुका है और यह परिषद् कुछ परिणाम पर पहुंची तथा कुछ विषयों पर इधर या उधर निर्णय किया। अतः हम किसी स्थिति पर पहुंच चुके हैं। समितियों ने प्रश्नों के अध्ययन करने तथा रिपोर्ट तैयार करने के पश्चात् इन रिपोर्टों पर परिषद् में वाद-विवाद तथा तर्क हुआ और बहुत से प्रश्नों पर निर्णय कर लिया गया है और थोड़े से विषय छोड़ दिये गये हैं। अब प्रश्न ये उठते हैं। पहला प्रश्न है कि विधान का मस्विदा बनाने के लिये समिति का निर्वाचन अब किया जाये या शेष विषयों पर इस महान् परिषद् द्वारा विचार करने के पश्चात् उसका निर्वाचन किया जाये। यह पहला प्रश्न है जिस पर निर्णय करना है। दूसरा प्रश्न है कि जो निर्णय इस सभा द्वारा किये जा चुके हैं, उन पर जब कि विधान का मस्विदा सामने आये फिर विचार किया जा सकता है या नहीं। इस प्रस्ताव पर इन दो प्रश्नों पर विचार करना है। मेरा यह स्पष्ट मत है कि उन विषयों पर, जिनका निर्णय हो चुका है, फिर विचार करने की न तो गुंजाइश है और न यह उचित है। जैसा कि मेरे मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने कहा है कि उन पर वाद-विवाद हो चुका है। उन पर विचार करने वाली कुशल समितियों द्वारा पेश की गई रिपोर्टों में उनकी जांच हो चुकी है। वे फिर पूर्ण रूप से लाये गये और इस संस्था द्वारा उन पर वाद-विवाद हुआ। अतः श्रीमान् जी, मेरे विचार से इस अवस्था में उन पर फिर विचार करने से कोई लाभदायक फल नहीं होगा और न यह ठीक तथा उचित ही है।

***श्री सी. सुब्रह्मण्यम्** (मद्रासः जनरल): श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। कार्य-पद्धति का नियम 32 इस प्रकार है:

> **''कोई प्रश्न जिस पर परिषद् द्वारा निर्णय हो चुका है फिर से विचार करने के लिये नहीं रखा जायेगा जब तक कि उपस्थित सदस्यों तथा मतदाताओं के कम से कम चौथाई भाग की स्वीकृति न हो।''**

अतः यह स्पष्ट है कि हमने निर्णय किये हुये प्रश्नों को फिर से विचार करने के लिये लेने की व्यवस्था रख दी है। जब ऐसी सूरत है तो मैं जानना चाहूंगा कि इस प्रश्न पर फिर वाद-विवाद ही क्यों हो? निर्णयों पर फिर से विचार करने की व्यवस्था हमने बना ही दी है। अतः मैं निवेदन करता हूं कि एक बार निश्चित

किये गये निर्णयों पर पुनः विचार करने के विषय पर कोई वाद-विवाद करने की आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्षः** आपको यह वैधानिक आपत्ति उस समय उठानी चाहिये थी जबकि प्रथम वक्ता ने विषय उपस्थित किया था। अब चूंकि वाद-विवाद इतना बढ़ चुका है कि वह बीच में बन्द नहीं किया जा सकता। लेकिन फिर भी मेरे विचार से इस प्रश्न पर बहुत वाद-विवाद हो चुका है और मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे यथासम्भव अपनी बातों को संक्षेप में कहें।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुरः** दूसरा प्रश्न प्रस्तावित कानून का मस्विदा बनाने के लिये जांच समिति का है। मैं अपने मित्र डा. सीतारमैया से पूर्णतया सहमत हूं कि जो विषय रह गये हैं उन पर सभा द्वारा वाद-विवाद तथा तर्क किया जाये और उनकी जांच की जाये और जब हम यह कर चुकें उस समय इस मस्विदा बनाने वाली कमेटी के नियुक्त करने का अवसर होगा। मैं ऐसा कोई कारण नहीं देखता कि जो विषय छोड़ दिये गये हैं उन पर इस सभा द्वारा वाद-विवाद क्यों न हो। क्या यह विचार लिया गया है कि जो विषय छोड़ दिये गये हैं वे इतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं जितने कि अन्य? यह स्पष्ट है कि ऐसी बात नहीं है। एक सदस्य ने कहा है कि प्रस्तावित कानून के हाउस में आने के बाद वह जांच समिति के पास जाये। मैं नहीं समझता हूं कि जब यह बड़ी संस्था—पूरी परिषद् एक बार पूर्ण विषय पर विचार कर लेती है और इधर या उधर—उन पर निर्णय कर देती है तो इसकी कोई आवश्यकता है। अतः जांच समिति के नियुक्त किये जाने की कोई आवश्यकता नहीं है जिसके सामने मस्विदा-पत्र रखा जाये और मैं निवेदन करता हूं जैसे हमने अनेकों विषयों पर निश्चय किये हैं उसी प्रकार इस संस्था द्वारा शेष विषयों पर भी निश्चय किये जाने चाहियें जिससे कि मस्विदा बनाने वाली समिति के पास जो काम शेष रहे वह केवल उन विषयों को, जिन पर निर्णय किया जा चुका है, कानूनी रूप में रखने का हो तथा इतना निर्णयों से यदि कोई परिणामभूत व्यवस्था आवश्यक हो तो उसे रखने का हो। इतना यथेष्ट है। जब मस्विदा-पत्र इस सभा के समक्ष आयेगा तो हमारे लिये उस पर कार्यवाही करना सरल हो जायेगा तथा उस पर आरम्भ से कार्यवाही करने में हमको जितने समय की आवश्यकता होगी उससे कम समय में पास हो जायेगा। अतः मैं निवेदन करता हूं कि किसी प्रकार भी साधारणतया जबकि मस्विदा हमारे सामने रखा जायेगा उस पर पुनः विचार करने का अधिकार हमको नहीं होगा। साथ ही साथ मेरी यह राय है कि जिन विषयों पर अभी तक निर्णय नहीं किया है उन पर जिस

[श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर]

प्रकार से पहले अन्य विषयों पर निर्णय किया गया है उसी प्रकार निर्णय किया जाये और इस अवस्था में हमारे लिये समिति का नियुक्त करना आवश्यक नहीं है।

***श्री राजकृष्ण बोस** (उड़ीसा: जनरल): मिस्टर प्रेसीडेण्ट, मुझे इसके बारे में कुछ ज्यादा नहीं कहना है। लेकिन मेरे ख्याल में अभी तक जो कार्यवाही हुई है और उसका जो सिलसिला चल रहा है वह मुनासिब और ठीक होता कि उसकी कन्सिस्टेन्सी रहती। आज जितनी बहस हुई है उससे मालूम होता है कि हम जिस लाइन पर चल रहे थे, जिस सिलसिले के मुताबिक हम चल रहे थे, हम उसको बदलने जा रहे हैं। यहां हमने पहले यह सोचा था कि कान्स्टीट्यूशन की तैयारी के पहले हम इसके प्रिन्सिपल्स तय कर दें। इसके लिये आपने दो बड़ी कमेटियां बनाई और वह प्रिन्सिपल्स तय कर चुकी हैं। जब प्रिन्सिपल्स एक मर्तबा तय हो चुके तो हमको चाहिये था कि इस सेशन में उन प्रिन्सिपल्स के बारे में हम अपनी राय दे देते जो औलरेडी तय हो चुके थे। मैं आपसे अर्ज करूंगा कि यह नहीं हो सका। क्योंकि, यह मौजूदा सेशन 31 अगस्त से पहले खत्म होता है। इसके लिये मैं चाहूंगा कि अब से जब हम लोगों को बैठक में भाग लेने के लिये बुलाया जाये तो हम लोगों को क्लीयर डाइरेक्टिव हों कि हमें कितने दिन ठहरने के लिये तैयार रहना चाहिये। हमको अभी तक कोई डाइरेक्टिव इस बारे में नहीं मिलता और हम यह समझ कर आते हैं कि दो या तीन रोज में काम खत्म करके हम लोग अपनी-अपनी कान्स्टीट्यूयैंसीज को वापस चले जायेंगे। लेकिन अब से यह साफ डाइरेक्शन होना चाहिये कि अन्दाजन इतने दिन तक सेशन चलेगा। ताकि मेम्बरों को यह कहने का मौका नहीं मिलेगा कि हम 31 तारीख के बाद इंगेजमेंट्स कर बैठे हैं और ज्यादा ठहरने की तैयारी करके नहीं आये हैं। मैं बहुत अदब के साथ यह कहना चाहता हूं कि हम लोगों को उन प्रिन्सिपल्स पर जिनको दो कमेटियां इतनी मेहनत के बाद तय कर चुकी हैं, अपनी राय दे देनी चाहिये थी। ऐसा न करना हम लोगों की गलती है और मैं समझता हूं कि हम लोग अपना फर्ज अदा नहीं कर रहे हैं। मैं समझता हूं कि जब आपने तय कर दिया कि 31 तारीख के बाद हम नहीं बैठेंगे, अगर नहीं बैठेंगे तो मैं अर्ज करूंगा कि उन (Union Constitution Principles) के बारे में अपनी राय देने के लिये जिन पर हम अभी तक राय नहीं दे पाये हैं उसके लिये सितम्बर के आखिर में या अक्टूबर के शुरू में एक दूसरा सेशन बुलाया जाये, जिस सेशन में हम

प्रिन्सिपल्स के बारे में अपनी राय दे दें। उसके बाद ड्राफ्ट बनना चाहिये और वह (draft) हम लोग जरूर मंजूर कर लेंगे। हां, अगर लेंगुएज़ में कोई गलती, कामा, फुलस्टोप की होगी तो हम उसको दुरुस्त कर सकेंगे। ड्राफ्ट हमारे सामने आयेगा और हम उसे अमेण्ड कर सकते हैं। लेकिन असली प्रिन्सिपल्स के खिलाफ हम नहीं कह सकते। हम तब यह नहीं कह सकते कि गवर्नर एडल्ट फ्रेन्चाइस के बजाये इनडाइरेक्ट इलेक्शन के तौर पर चुना जाये। अगर इस तरह हम प्रिन्सिपल्स को चेंज करते जायेंगे तो कान्स्टीट्यूएंट असेम्बली का काम बड़ा मुश्किल हो जायेगा और काम खत्म न हो पायेगा। इसलिये मैं बहुत अदब के साथ अर्ज करना चाहता हूं कि अभी तक जो सिलसिला चल रहा है उसकी (consistency) रखी जाये और बचे हुये यूनियन कान्स्टीट्यूशन और प्राविंशियल कान्स्टीट्यूशन प्रिन्सिपल्स पर राय लेने के लिये दूसरा सेशन सितम्बर के आखिर या अक्तूबर के शुरू में बुलाया जाये। उसके बाद ड्राफ्टिंग कमेटी या कान्स्टीट्यूशनल एडवाइज़र को ड्राफ्ट तैयार करने के लिये टाइम देंगे और जब यह ड्राफ्ट तैयार होकर हमारे सामने आयेगा हम अपनी फाइनल राय दे देंगे। इसलिये यह जरूरी है कि अब तक का जो सिलसिला है उसको जारी रखा जाये। दूसरे अब से कान्स्टीट्यूशनल असेम्बली की बैठक बुलाने के वक्त यह डाइरेक्टिव होना चाहिये कि अन्दाजन इतने समय के लिये हमें ठहरना पड़ेगा और मेम्बर लोग जो खुद अन्दाज लगा लेते हैं कि इतने दिन में काम खत्म हो जायेगा और वह अपना प्रोग्राम उसके मुताबिक बना लेते हैं, वह उस अन्दाज से काम नहीं करेंगे बल्कि वह अपना प्रोग्राम आपके डाइरेक्टिव के मुताबिक बनायेंगे और तब यह तमाम मुश्किलें नहीं पैदा होंगी।

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जो प्रस्ताव पेश किया गया है मैं उसका विरोध करता हूं; क्योंकि मैं अनुभव करता हूं कि इस हालत में हमारे लिये किन्हीं विशेषज्ञों की या अन्य व्यक्तियों की समिति नियुक्त करना ठीक नहीं है जोकि उन बातों पर गौर करें जिन पर हमने अभी तक निर्णय नहीं किया है। इसे मैं भली प्रकार समझ सकता हूं कि जो निर्णय किये जा चुके हैं उनको सांचे में ढाला जा सकता है और वैधानिक भाषा का स्वरूप दिया जा सकता है, परन्तु कुछ वक्ताओं ने यह संकेत किया है कि यह समिति उन विषयों पर भी गौर करेगी जिन पर सभा ने अपना निर्णय नहीं दिया है। बहुत से महत्त्वपूर्ण विषय अभी छोड़ दिये गये हैं। उन पर इस परिषद् ने निर्णय नहीं किया है और मैं नहीं समझ पाता कि विधान बनाने के अपने अधिकार को हम किसी समिति को कैसे सौंप सकते हैं। मैं समझता हूं कि इसमें कोई मतभेद हो ही नहीं सकता

[माननीय श्री जयपाल सिंह]

है। यह मैं मानता हूं कि जहां तक उन वाक्यखण्डों तथा अन्य बातों का सम्बन्ध है जिन पर हम निर्णय कर चुके हैं, एक समिति उनको उपयुक्त वैधानिक भाषा में रख सकती है। यहां एक प्रश्न उठाया गया है, किसी प्रकार के अन्तिम रूप तक पहुंच जाना चाहिये। सच है। हम एक विधान बना रहे हैं और वह शब्द स्वयं यह अर्थ रखता है कि हमें उसमें प्रति पांच मिनट के पश्चात् परिवर्तन नहीं करना है, परन्तु इसके साथ-साथ अन्तिम रूप तक पहुंचने के पूर्व हमको स्थिति के अवलोकन करने का यथेष्ट अवसर मिलना चाहिये। यह हो सकता है कि हम कुछ निर्णयों को रद्द कर दें। सभा सर्वोच्च संस्था है और उसे निर्णयों के करने तथा उन्हें रद्द करने का अधिकार है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस हालत में समिति नियुक्त कर हम एक उल्टा काम कर रहे हैं। हमने यह खूब अनुभव कर लिया है कि शीघ्रता करने से कोई लाभ नहीं। हमने विशेषज्ञों की समितियां नियुक्त कीं, उन्होंने अपनी रिपोर्टें पेश की, और जो कुछ हुआ वह यह है कि जब ये रिपोर्टें परिषद् के सामने आईं तो उनमें से सारवस्तु को ले लिया गया और विशेषज्ञों की सिफारिशों में अनेकों महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किये गये। यही हाल मस्विदा बनाने वाली समिति का होगा, जबकि वह अपनी रिपोर्ट पेश करेगी। मेरे विचार से इस मामले में भी हम अपना समय गंवायेंगे। मैं समझता हूं कि अच्छी बात यह होगी कि जो कुछ काम बाकी है हम उसे पूरा करें और तब मस्विदा बनाने वाली समिति इस स्थिति में होगी कि परिषद् द्वारा किये गये समस्त निर्णयों को पूर्णतया प्राप्त कर एक प्रस्तावित कानून बना सके जो हमारे सामने आ सकता है और तब हम अन्तिम रूप में यह निश्चय कर सकते हैं कि हम प्रस्तावित कानून की भाषा या विषय में परिवर्तन करना चाहते हैं या नहीं। श्रीमान् जी, मैं विशेषकर अनुभव करता हूं कि इस कमेटी पर उदाहरण के रूप में कबायली विषय से सम्बन्धित वाक्यखण्डों की वैधानिक भाषा का मस्विदा बनाने का कार्य भी नहीं छोड़ना चाहिये। अभी कबायली समिति को, जो कि परामर्शदातृ समिति द्वारा नियुक्त की गई समितियों में से है और जिसको इस परिषद् ने फिर नियुक्त कर दिया है, अभी अपना कार्य समाप्त करना है। क्या इसका अर्थ यह है कि यह विशेषज्ञों, मस्विदा बनाने वाले विशेषज्ञों, की समिति प्रस्तावित कानून में वे विषय रख रही है जो कि अभी तक परिषद् के सामने नहीं आये हैं? मेरे विचार से ऐसा करना हमारे लिये मूर्खतापूर्ण होगा। सभा को अपने निर्णय करने का अधिकार होना चाहिये और मैं निवेदन करता हूं कि हम किसी समिति को विधान बनाने के अधिकार नहीं सौंप सकते चाहे उसमें कितने ही महान् विशेषज्ञ क्यों न हों। हमने उनके काम को देखा है, हम उनके किये गये काम के लिये उनके कृतज्ञ हैं, परन्तु हमारा यह अनुभव है कि विशेषज्ञों को भी हटा देना पड़ता है जबकि जो विषय वे उपस्थित करते हैं सभा के समक्ष आता है।

***माननीय श्री हुसैन इमाम** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस सभा का समय लेना नहीं चाहता हूं। मैं केवल उन परिस्थितियों को बताना चाहता हूं जिनमें हम काम कर रहे हैं। इस समय देश में इतना संकट तथा इतनी गड़बड़ी है कि हमारा यहां बैठना और अपने कर्तव्य का पालन करने के लिये अपनी जगहों पर न होना अस्वाभाविक सा प्रतीत होता है। एक सुझाव रखा गया था कि इस अधिवेशन को जारी रखा जाये। मेरे ख्याल से इस अधिवेशन को अति आवश्यक समय से एक दिन भी अधिक जारी रखना घातक होगा। हमें इस अधिवेशन को यथासम्भव शीघ्र ही समाप्त कर देना चाहिये और वापस जाकर देश में शान्ति का संदेश देना चाहिये। भारत के नागरिक होने के नाते यह हमारा कर्तव्य है कि हम यह देखें कि शान्ति कायम की जा रही है। श्री सत्यनारायण सिनहा का प्रस्ताव साधारण है और मैं नहीं समझता कि सदस्यों ने इतना अधिक अविश्वास क्यों प्रकट किया। हमें इन पर शान्ति-पूर्वक विचार करने दीजिये। इस प्रकार की परिषद् विषयों की विवरण-सहित परीक्षा नहीं कर सकती है। सब जगह विवरण-पूर्ण जांच, जांच समिति के सुपुर्द की जाती है। यहां भी हमें दुहरी जांच करने का लाभ है। पहली आपकी संघ-अधिकार समिति और फिर संघ-विधान समिति। इन दोनों ने विषय पर विचार किया, समस्त विषयों का सूक्ष्म परीक्षण किया और अपनी सिफारिशें तैयार कीं। इसके बाद सभा द्वारा उन पर विचार हुआ। लेकिन सभा को मैं यह बता दूं कि इसमें सन्देह नहीं कि अनेकों संशोधन पेश किये गये, परन्तु जो संशोधन स्वीकार हुये वे अधिकतर प्रेरणात्मक संशोधन थे और जिस समिति को प्रस्तावित किया गया है वह उन विशेषज्ञों की है जिनकी राय से यह सभा प्रभावित हुई है। आपके पास गारण्टी है कि दुहरी जांच के पश्चात् विशेषज्ञों द्वारा तीसरी जांच होगी। सभा के अधिकार छीनने का प्रश्न ही नहीं है। सर्वोच्च संस्था होने से सभा को प्रत्येक चीज में परिवर्तन करने का अधिकार है जिसको उसने पहले स्वीकार नहीं किया है। केवल वे ही शुद्ध हैं जिनको सभा स्वीकार कर चुकी है और सभा की स्वीकृति के पश्चात् आप एक सर्वोच्च संस्था के रूप में निज का सम्मान करें, आत्म-नियंत्रण करें, और अपने निर्णयों को वापस न लें। अत: यदि ऐसा कोई मद आता है जिसको सभा ने स्वीकार नहीं किया है तो सभा को उसकी परीक्षा करना, उस पर पुन: विचार करना तथा उसमें परिवर्तन करने का अधिकार होगा। सभा के उन प्रस्तावों में संशोधन करने के अधिकार को, जिनको सिद्धांत रूप से स्वीकार नहीं किया गया है, कोई अस्वीकार नहीं कर सकता, परन्तु यही वह बात है जिसे मैं चाहता हूं कि सभा माने हम पहेलियों में बातें कर रहे हैं। हम वास्तव में भिन्न-भिन्न दल वाले हैं और उन्हीं के बीच निर्णय किये गये

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

हैं। इसका कोई विचार नहीं चाहे मनुष्य कुछ भी कहें परन्तु जब किसी दल का बहुमत यह अनुभव करता है कि यह संशोधन स्वीकार किया जाना चाहिये तभी वह दल के प्रश्न के रूप में रखा जा सकता है और वे भी जो इसके विपक्ष में होते हैं पक्ष में मत देते हैं। स्थिति का वास्तविक रूप यह है। अतः यह कहना व्यर्थ है कि यदि समिति नहीं बनाई जाती तो सुझावों को स्वीकार कराने के यहां अच्छे अवसर हैं। चाहे समिति बने या नहीं दल का यंत्र संचालित रहेगा और इस कारण प्रेरणात्मक संशोधन जिनको दल की स्वीकृति प्राप्त है वे पास किये जा सकते हैं। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि पद्धति में आपत्ति करना व्यर्थ है। पद्धति बिल्कुल सही है। कार्यालय द्वारा रखे गये विधान-मस्विदे की परीक्षा करने के लिये आपने सर्वोत्तम व्यक्ति नियुक्त किये हैं और इस कमेटी की उन सिफारिशों को अस्वीकार करना कठिन नहीं होगा जिनको सभा द्वारा विशिष्ट रूप से स्वीकार नहीं किया गया है। मैं इसलिये अनुभव करता हूं कि इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से सभा द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिये।

***श्री शंकर दत्तात्रेय देव** (बम्बईः जनरल): श्रीमान् जी, मैं विवादान्तक प्रस्ताव रखता हूं।

***अध्यक्षः** विवादान्तक प्रस्ताव पेश किया जा चुका है। मैं उसे सभा के समक्ष रखता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** श्री सत्यनारायण सिनहा उत्तर दे सकते हैं।

***श्री रामनाथ गोयनका** (मद्रासः जनरल): कुछ संशोधन पेश नहीं किये गये।

***अध्यक्षः** मैं संशोधनों को बाद में लूंगा। अभी मैं प्रस्ताव के मूल विषय से सम्बन्धित संशोधन को ले रहा हूं।

***श्री सत्यनारायण सिन्हाः** श्रीमान् जी, मैं यह स्वीकार करता हूं कि मेरे अनेकों मित्रों द्वारा जो शंकायें तथा भ्रम प्रकट किये गये हैं मैं उनके गुण को ग्रहण न कर सका। मेरे विचार से मस्विदा बनाने वाली समिति की रिपोर्ट सभा के समक्ष होगी और इस सभा का परिवर्तन करने का, बदलने का या जो कुछ वह चाहे करने का स्वभाव-सिद्ध अधिकार है। मेरे विचार से परिषद् को अपने किये गये

निर्णयों में परिवर्तन करने का अधिकार है, परन्तु यह उचित नहीं है कि जो निर्णय एक बार किये जा चुके हैं उनमें वह परिवर्तन करती चली जाये और इसलिए मेरे विचार से सभा इस बात से सहमत नहीं होगी कि जिन महत्वपूर्ण सिद्धांतों पर वाद-विवाद हो चुका है और निर्णय किया जा चुका है उनमें परिवर्तन किया जाये। लेकिन उन सिद्धान्तों पर, जिनको पूरे मस्विदा पत्र के मस्विदे तैयार करने में शामिल करना है, जिन पर हमने अपना मत प्रकट नहीं किया है या निर्णय नहीं किया है, मेरे विचार से इस सभा को परिवर्तन करने या बदलने का पूर्ण अधिकार है। मैं किसी गड़बड़ी का कोई कारण नहीं देख पाता हूं। कमेटी की रिपोर्ट सभा के समक्ष होगी और उसे परिवर्तन करने, बदलने या जो कुछ वह चाहे करने का अवसर प्राप्त होगा।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से प्रस्ताव पर वोट लेने से पूर्व मेरे लिये यह आवश्यक है कि मैं स्थिति को स्पष्ट करूं। मैं समझता हूं कि इस सभा के सदस्यों से अधिकार छीनने की कोई मंशा नहीं है और यदि ऐसी मंशा हो भी तो उसका कोई प्रभाव नहीं हो सकता है। विचार यह है कि अगले अधिवेशन में लगभग पूर्ण रूप में सभा के सामने मस्विदा रखा जाये, जिससे कि पूर्ण मस्विदे पर सदस्य ध्यान दे सकें और फिर किसी परिणाम पर पहुंचें और मस्विदे की एक-एक धारा लेकर उसे पास करें। कुछ महत्वपूर्ण मदों के सिद्धान्तों पर हमने वाद-विवाद कर लिया है और उनको स्वीकार कर लिया है और कुछ ऐसे भी हैं जिन पर हमने अभी तक वाद-विवाद भी नहीं किया है। विचार यह है कि वह कमेटी, जिसका अभी सुझाव रखा है, न केवल उन सिद्धान्तों के मस्विदे को जो स्वीकार कर लिये गये हैं बल्कि उनके मस्विदे का भी जिन पर हमने अभी विचार नहीं किया है, तैयार करे। वास्तव में दोनों ही सभा के समक्ष होंगे, पर वे विभिन्न आधार पर होंगे। उन भागों को जिनकी स्वीकृति दी जा चुकी है सभा एक दृष्टिकोण से विचारेगी। साधारण रूप से सभा अपने पूर्व निर्णय की पुष्टि करेगी और उनमें तब तक परिवर्तन न करेगी जब तक कि वह यह न मालूम कर ले कि ऐसी कोई बात है जिससे पुन: विचार करना आवश्यक है। लेकिन उन मदों की जिन पर हमने अभी तक वाद-विवाद नहीं किया है, सभा स्वभावत: अधिक स्वतंत्रता या गुँजाइश के साथ जांच करेगी। मैं समझता हूं कि समय बचाने का यह सबसे अच्छा मार्ग है, जिससे कि सभा पूरे विषय पर विचार कर सकती है और जैसा विधान होगा उसको समझने योग्य विचारधारा रखने का अवसर प्राप्त कर सकती है। मुझे यह कहना है कि मैं विधान को समाप्त करने के लिये चिंतित हूं, लेकिन

[अध्यक्ष]

इसके साथ-साथ मैं इसके लिये भी समान रूप से चिंतित हूं कि हम कोई काम जल्दी में न करें तथा प्रत्येक वाक्य-खंड पर, वाक्य-खण्ड के प्रत्येक मद पर तथा मद के प्रत्येक शब्द पर अन्तिम स्वीकृति देने के पूर्व समस्त सदस्यों द्वारा विचार किया जायेगा, सावधानीपूर्वक विचार किया जायेगा। (*वाह, वाह*) अतः जब मस्विदा अन्तिम रूप में हमारे सामने विचारार्थ आयेगा तो उस पर यथासम्भव पूर्णातिपूर्ण विचार करने के लिये हम उतना समय लेंगे जितना कि आवश्यक समझा जाये और सदस्यों को उसमें आये हुये प्रत्येक शब्द पर विचार करने का तथा मस्विदे पर अपना निजी निर्णय देने का अवसर मिलेगा। मैं समझता हूं कि इसके साथ सदस्यगण संशोधित रूप में इस प्रस्ताव को स्वीकार करने की कृपा करेंगे जो कि इस समिति को उन विषयों का मस्विदा बनाने में, जो वास्तव में उन सिद्धान्तो के अन्तर्गत नहीं आते जिन पर हम निर्णय कर चुके हैं, लेकिन जो उनमें निहित हैं, अधिक सुविधा प्रदान करेगा। मैं अब श्री खेर के संशोधन पर सभा का मत लेता हूं।

***एक माननीय सदस्यः** आपकी उस घोषणा के बाबत क्या हुआ कि प्रस्तावित कानून हिन्दी में होगा या राष्ट्रीय भाषा में?

***अध्यक्षः** हम उसे हिन्दी में रखेंगे। जब समय आयेगा मैं उसे आपके सामने रखूंगा।

***एक माननीय सदस्यः** प्रस्तावित कानून का अध्ययन करने के लिये आप हमें कितने सप्ताह देंगे?

***अध्यक्षः** उपयुक्त समय दो से तीन सप्ताह तक का होगा। अब मैं श्री बी. जी. खेर के संशोधन पर मत लूंगा।

प्रश्न है :

'' 'परिषद् के कार्यालय में परिषद् द्वारा किये गये निर्णयों को प्रभाव देने के लिये तैयार किये गये भारत के विधान-मस्विदे की जांच करना तथा उसमें आवश्यक संशोधनों के लिये सुझाव रखने के लिये' शब्दों के स्थान में निम्न शब्द रख दिये जायें:

'परिषद् में किये गये निर्णयों को प्रभाव देने के लिये वैधानिक परामर्शदाता द्वारा तैयार किये गये भारत के विधान के मूल विषय

की जांच करना, मय उन सब विषयों के जो उसके लिये सहायक हैं या जिनकी ऐसे विधान में व्यवस्था करनी है और कमेटी द्वारा पुनरवलोकन किये हुये विधान के मस्विदे के मूल रूप को परिषद् के समक्ष विचारार्थ उपस्थित करना'।''

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधित रूप में प्रस्ताव को रखता हूं।

संशोधित प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** सदस्यों के नामों के सम्बन्ध में जो कमेटी में होंगे मैं देखता हूं कि अनेकों संशोधन हैं।

***माननीय सदस्यगणः** हम संशोधनों को पेश नहीं कर रहे हैं।

***डा. पी.एस. देशमुखः** मैं अपने उन समस्त मित्रों से, जिन्होंने सूची में मेरे नाम के बढ़ाये जाने के संशोधन की सूचना दी है, निवेदन करता हूं कि वे अपने संशोधनों को पेश न करें। मस्विदा-समिति के सदस्य के रूप में मेरे नाम को रखने के प्रस्ताव करने की कृपा के लिये मैं उनका कृतज्ञ नहीं हूं।

***अध्यक्षः** तो फिर सूची में नये नाम बढ़ाने के संशोधनों को हमने हटा दिया।

एक सुझाव है, जो बेगम ऐज़ाज़ रसूल ने रखा है और वह यह है कि यदि कोई सदस्य समिति में उपस्थित होने में असमर्थ है अथवा यदि कोई स्थान रिक्त होता है तो उसे भरने का मुझे अधिकार दिया जाये। मैं मानता हूं कि यह सुझाव इस कारण रखा है कि दुर्भाग्यवश मि. सादुल्ला स्वस्थ नहीं हैं और समिति की सेवा नहीं कर सकेंगे। मैं यह माने लेता हूं कि यदि वास्तव में स्थान रिक्त हुआ तो सभा मुझे उसे भरने की आज्ञा दे देगी।

***माननीय सदस्यगणः** ''हां''।

***अध्यक्षः** प्रश्न है किः

श्री सत्यनारायण सिनहा द्वारा प्रेषित किये गये प्रस्ताव में जो मूल रूप में नामावली दी गई है वह स्वीकार की जाये।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

विधान-परिषद् की कार्यवाही-सम्बन्धी कमेटी की रिपोर्ट–(जारी)

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

परिषद् के 20 अगस्त सन् 1947 ई. के प्रस्ताव के अनुसार अध्यक्ष द्वारा नियुक्त की गई कमेटी द्वारा भारतीय-स्वतंत्रता एक्ट 1947 के अन्तर्गत विधान-परिषद् के कार्यों पर पेश की गई रिपोर्ट पर यह परिषद् विचार करे।

श्रीमान् जी, कमेटी की रिपोर्ट सभा के सदस्यों में घुमाई जा चुकी है और मैं समझता हूं कि ऐसी दशा में जबकि सदस्यों के पास कम से कम गत दो दिन से रिपोर्ट रही है मुझे कमेटी के कार्यों की लम्बी व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। मैं विचार करता हूं कि मेरे लिये मुख्यत: कमेटी की सिफारिशों की ओर ध्यान आकर्षित कराना यथेष्ट होगा।

कमेटी ने कुल पांच सिफारिशें की हैं। उसकी पहली सिफारिश यह है कि विधान-परिषद् का यह अधिकार है कि वह व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे और उसे इस रूप में कार्य करना चाहिये; (2) व्यवस्थापिका की हैसियत से काम करने में उसे यथासम्भव आवश्यक परिवर्तनों के साथ धारा-सभा के नियमों का पालन करना चाहिये; (3) आवश्यक परिवर्तन विधान-परिषद् के अध्यक्ष की आज्ञा के अन्तर्गत किये जाने चाहियें; (4) विधान बनाने वाली संस्था के रूप में विधान-परिषद् का कार्य तथा साधारण व्यवस्थापिका का कार्य पृथक्-पृथक् होना चाहिये और पृथक्-पृथक् दिवसों में पृथक्-पृथक् अधिवेशनों में होना चाहिये; (5) व्यवस्थापिका को समाप्त करने का अधिकार अध्यक्ष को होना चाहिये न कि गवर्नर-जनरल को जैसा कि भारतीय सरकार एक्ट के संशोधन में पाया जाता है। इन सिफारिशों के करने के पश्चात् कमेटी ने विचार किया कि कोई ऐसी कठिनाइयां तो नहीं हैं जो उनकी सिफारिशों को प्रभाव देने में रुकावट डालें और देखा कि ऐसी तीन कठिनाइयां हैं।

पहली यह थी कि वही एक व्यक्ति दोनों विधान-परिषद् और व्यवस्थापिका में अध्यक्ष का कार्य करे या नहीं। यह कठिनाई इस कारण पैदा हुई कि भारतीय एक्ट की धारा 22 को, जो स्पीकर के कर्तव्य के सम्बन्ध की थी, उन संशोधनों द्वारा हटा दिया गया जो कि भारतीय स्वतन्त्रता एक्ट के अन्तर्गत स्वीकार किये गये थे जिसके फलस्वरूप अध्यक्ष वह व्यक्ति है जो दोनों विधान-निर्माण-संस्था

तथा व्यवस्थापिका पर अध्यक्षता करे। साधारणतया इससे कुछ कठिनाई नहीं होनी चाहिये, लेकिन उस परिस्थिति में जबकि अध्यक्ष सरकारी मंत्री हो, यह कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। उदाहरण के रूप में यह नियम-विरुद्ध बात होगी कि वह अध्यक्ष, जो कि सरकारी मंत्री भी है, विधान-परिषद् की अध्यक्षता करे जबकि वह व्यवस्थापिका का कार्य कर रही हो। अत: कमेटी ने सोचा कि दो मार्गों में से एक को ग्रहण करना होगा। या तो अध्यक्ष मन्त्री न रहे, या यदि वह मन्त्री बना रहता है तो परिषद् एक और अफसर चुने जो स्पीकर या उपाध्यक्ष कहा जाये जिसका कार्य यह होगा कि वह उस विधान-परिषद् के अधिवेशन में अध्यक्षता करे जो कानून-निर्माण करने के आशय से हो।

दूसरी कठिनाई जो कमेटी के सामने आई वह रियासतों के प्रतिनिधियों के सम्बन्ध में थी। सभा को यह स्मरण होगा कि विधान-परिषद् जब कानून-निर्माण करने के आशय से बैठक करेगी तो वह भारतीय एक्ट के सातवें परिच्छेद की सूची (1) में दिये हुये सम्पूर्ण विषयों पर कार्य करेगी। सभा को यह भी याद होगा कि अभी रियासतें विधान-परिषद् में स्वीकृति-पत्र (Instrument of accession) नामक योजना के आधार पर सम्मिलित हुई हैं जो कि सूची (1) में दिये गये विषयों के पूर्णतया अनुरूप नहीं है। अत: जो प्रश्न उठता है वह यह है कि उन लोगों को, जो कि विधान-परिषद् के सदस्य हैं तथा स्वीकृति-पत्र के बन्धन में हैं और मदों की एक छोटी संख्या का उत्तरदायित्व ग्रहण किये हुये हैं, उन अन्य विषयों से सम्बन्धित प्रस्तावों तथा वाद-विवादों में भाग लेने दिया जाये या नहीं जो स्वीकृति पत्र की सूची में शामिल नहीं किये गये थे। इस विषय पर विचार करने के दो तरीके थे। एक यह था कि उस पद्धति को ग्रहण किया जाये जो कि ''अन्दर और बाहर'' के नाम से कही जाती है, कि वे परिषद् में बैठें और वोट दें जबकि किसी ऐसे मद पर वाद-विवाद हो, जो दोनों पर लागू है, अधिकार-पत्र में भी है और सूची (1) में भी और जब किसी ऐसे मद पर सभा में वाद-विवाद चल रहा हो जो कि अधिकार-पत्र के अन्तर्गत नहीं है तो उनको भाग न लेने दिया जाये। कमेटी इस परिणाम पर पहुंची कि यद्यपि सिद्धान्त रूप में दूसरी पद्धति अधिक तर्क-संगत है, परन्तु क्रियात्मक दृष्टि से ऐसा भेद-विभेद अपनी वर्तमान परिस्थितियों में नहीं करना चाहिये। अत: कमेटी ने यह सिफारिश की है कि सूची (1) तथा अधिकार-पत्र के विषयों पर ध्यान न देते हुए भारतीय रियासतों के प्रतिनिधि समस्त विषयों से सम्बन्धित प्रस्ताव में दोनों सूचियों के भेद-विभेदों पर विचार न करते हुए भाग लेते रहेंगे।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

तीसरा प्रश्न, जिसका कमेटी ने अनुभव किया मंत्रियों की स्थिति का था। जैसा कि सभा को विदित है, ऐसे कुछ मन्त्री हैं जो कि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं। इस प्रकार के कुल पांच मन्त्री हैं। विचार के लिये यह प्रश्न उठता है कि वे मंत्री जो विधान-परिषद् के सदस्य हैं विधान-परिषद् की कार्यवाही में तथा व्यवस्थापिका में भी भाग लें या नहीं। जहां तक उनका व्यवस्थापिका के कार्यों में भाग लेने से सम्बन्ध है उनकी स्थिति इस कारण सुरक्षित है कि भारतीय सरकार के एक्ट की धारा (10) के उप-वाक्यखण्ड (2) को संशोधन द्वारा ग्रहण कर लिया है और सभा के सदस्य जानते हैं कि धारा (10) के उप-वाक्यखण्ड (2) की व्यवस्था के अन्तर्गत बावजूद इसके कि कोई व्यक्ति व्यवस्थापिका का सदस्य नहीं है, फिर भी वह व्यवस्थापिका के कार्यों में भाग लेता रहेगा और मंत्री हो सकेगा। इसके अनुसार वे मंत्री जो विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं विधान-परिषद् में जब कि वह व्यवस्थापिका का कार्य करे बैठने के अधिकारी होंगे और वे सरकारी मन्त्री भी बने रहेंगे।

जो प्रश्न शेष रहता है वह यह है कि विधान-परिषद् के सम्बन्ध में क्या हो। अभी तक चूंकि वे विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं, वे विधान-परिषद् के विधान-निर्माण सम्बन्धी कार्य में भाग लेने के अधिकारी नहीं हैं। कमेटी इस परिणाम पर पहुंची कि विधान बनाने के विषय में विधान-परिषद् को उनकी सहायता प्राप्त करने की आवश्यकता है और जिस प्रकार धारा (10) का उप-वाक्यखण्ड (2) उनको व्यवस्थापिका के कार्यों में भाग लेने की आज्ञा देता है, उसी प्रकार विधान-परिषद् को भी ऐसी व्यवस्था बना देनी चाहिये जिसके द्वारा सरकारी मंत्री जो विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं विधान-परिषद् के कार्यों में भाग ले सकें।

श्रीमान् जी, दो विषय और हैं जिन पर कमेटी ने कुछ भी सिफारिश नहीं की है और यह आवश्यक है कि मैं उनका उल्लेख करूं। पहला प्रश्न दुहरी सदस्यता का है। जैसा कि सभा को विदित है विधान-परिषद् में कुछ ऐसे सदस्य हैं जो प्रांतीय व्यवस्थापिका के भी सदस्य हैं। अब तक कोई नियम-विरुद्ध बात नहीं है, क्योंकि विधान-परिषद् व्यवस्थापिका नहीं है। परन्तु, जबकि विधान-परिषद् व्यवस्थापिका के रूप में कार्य आरम्भ करेगी यह दुहरी सदस्यता का झगड़ा निःसंदेह उठेगा। मैं भारतीय एक्ट की धारा 68 (2) में दी गई व्यवस्था की ओर ध्यान

आकर्षित करूं जो इस विषय के सम्बन्ध में है। धारा 68 (2) किसी सदस्य को केन्द्रीय तथा प्रान्तीय दोनों व्यवस्थापिकाओं के सदस्य होने की आज्ञा नहीं देती है, लेकिन संशोधन द्वारा इस व्यवस्था को हटा दिया गया है। अतः विधान-परिषद् के सदस्यों के लिये जब कि वे व्यवस्थापिका के सदस्यों के रूप में कार्य कर रहे हैं, किसी अन्य व्यवस्थापिका के सदस्य होने की सुविधा है। परन्तु, वास्तव में ठीक तथा दृढ़ वैधानिक दृष्टिकोण से तो नियम विरोध है ही। यह विधान-परिषद् के निर्णय करने की बात है कि वह धारा 68 (2) के विपरीत सिद्धान्त को ग्रहण करेगी और दुहरी सदस्यता की आज्ञा देगी या धारा 68 (2) को रखते हुए वह कोई ऐसी उपयुक्त कार्यवाही करेगी जिससे दुहरी सदस्यता रोक दी जाये।

दूसरा प्रश्न जिस पर कमेटी ने कोई सिफारिश नहीं की है वह परिषद् की कार्यालय-सम्बन्धी व्यवस्था का है। परिषद् की कार्यालय-सम्बन्धी व्यवस्था एकमात्र विधान-परिषद् के अध्यक्ष के नियंत्रण के अंतर्गत एकात्मक व्यवस्था है। जब तक विधान-परिषद् के पास केवल यही एकमात्र कार्य, अर्थात् विधान तैयार करना था, इस विषय में कोई कठिनाई नहीं थी। लेकिन जब कि विधान-परिषद् अपने दो रूप में कार्य करेगी, एक बार विधान बनाने वाली संस्था के रूप में और दूसरी बार व्यवस्थापिका के रूप में, जिसका मुखिया कोई अन्य व्यक्ति स्पीकर या डिप्टी स्पीकर होगा तो कर्मचारियों को ठीक बिठाने के प्रश्न उपस्थित हो सकते हैं। लेकिन कमेटी ने सोचा कि विचारणीय विषय के अन्तर्गत उन्हें इस विषय पर विचार करने का अधिकार नहीं है इसलिये उन्होंने इसका उल्लेख ही नहीं किया। श्रीमान् जी, मैं समझता हूं कि जितना मैंने समय लिया है उससे अधिक सभा का समय लेने की मुझे आवश्यकता नहीं है। मेरे विचार से जो कुछ मैंने कहा है वह सदस्यों को जो कुछ कमेटी ने किया है उसकी याद दिलाने के लिये यथेष्ट होगा। और उनको रिपोर्ट पर अच्छी प्रकार से, जिसे वे पसन्द करें, विचार करने में सहायक होगा।

***अध्यक्षः** इस कमेटी की सिफारिशों का समावेश करते हुये श्री मुंशी ने एक प्रस्ताव की सूचना दी है। मेरे विचार से यह उत्तम होगा, यदि प्रस्ताव को पहले ले लिया जाये और वाद-विवाद उसके पश्चात् हो।

***डा. पी.एस. देशमुखः** श्रीमान् जी, क्या यह श्रेष्ठतर नहीं होगा कि पहले हम रिपोर्ट पर विचार करने के प्रस्ताव को लें और उस पर वाद-विवाद के पश्चात् अन्य संशोधनों को लें?

***अध्यक्ष:** क्या यह आवश्यक है कि रिपोर्ट पर विचार करने के लिये हम पृथक् वाद-विवाद करें? मेरे विचार से दोनों साथ-साथ चल सकते हैं, यदि सभा की आज्ञा हो तो। ठीक बात यह है कि जिस प्रस्ताव को श्री मुन्शी पेश कर रहे हैं वह लगभग वही वस्तु हैं।

***श्री के.एम. मुन्शी** (बम्बई: जनरल): मैं अपने संशोधन को पेश करता हूं। जिस प्रस्ताव को मैं पेश कर रहा हूं उसके पैरे रिपोर्ट के शब्दों में हैं, केवल एक या दो बातों के जिन पर मैं अभी सभा का ध्यान आकर्षित करता हूं। वाक्य-खण्ड उस रिपोर्ट में से ले लिये गये हैं जिसकी डा. अम्बेडकर ने व्याख्या की है। अत: मुझे उसे दुहराने की आवश्यकता नहीं है, परन्तु मैं एक या दो परिवर्तनों पर सभा का ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा, जो मैंने किये हैं और जो मेरे विचार से रिपोर्ट को उचित प्रभाव देने के लिये आवश्यक थे।

पैरा (4) इस प्रकार है:

''परिषद् के विचार-विमर्शों पर, जब कि वह संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे, अध्यक्ष का कार्य करने को एक अफसर, जिसको स्पीकर कहा जाये, के निर्वाचन के लिये यह विधान-परिषद् नियमों में उपयुक्त व्यवस्था बनाये।''

इस सिलसिले में मुझे यह कहना है कि रिपोर्ट ने सभा के समक्ष दो विकल्प रखे हैं:

विकल्प (क) यह है कि विधान-परिषद् का अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जिसका समस्त समय परिषद् के दोनों कामों को दिया जाये, जब कि वह विधान-निर्माण-कार्य में संलग्न हो तथा जब कि वह संघ-व्यवस्थापिका का कार्य कर रही हो। उन्होंने दूसरा विकल्प भी रखा है—यदि विधान-परिषद् का अध्यक्ष मंत्री है तो परिषद् के विचार-विमर्शों पर जब कि वह व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे अध्यक्ष का कार्य करने को एक अफसर के निर्वाचन के लिये यह विधान-परिषद् नियमों में उपयुक्त व्यवस्था रखे।

श्रीमान् जी, चूंकि आप मंत्री हैं मैंने दूसरा विकल्प चुना है और उसको मैंने अपने पैरा (4) में रखा है, जिसके फलस्वरूप सभा को परिषद् के विचार-विमर्शों पर जबकि वह व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे अध्यक्ष का कार्य करने के लिये एक अफसर का निर्वाचन करना पड़ेगा।

दूसरा परिवर्तन जिसके करने का मैंने साहस किया है वह उस अफसर का नाम है जिसके निर्वाचन के लिये मैंने सुझाव रखा है, कि निर्वाचन करने पर अफसर का नाम स्पीकर होना चाहिये, जिससे कि जब सभा विधान-परिषद् के रूप में बैठती है। हम अध्यक्ष को उस पर अध्यक्षता के लिये रखेंगे और जब वह व्यवस्थापिका के रूप में बैठती है तो निर्वाचित अफसर अध्यक्ष का पद ग्रहण करेंगे हम उनको स्पीकर कहेंगे। स्पीकर शब्द यथेष्ट महत्त्वूपर्ण होने के कारण वह यह सूचित करेगा कि हम एक व्यवस्थापिका के रूप में बैठ रहे हैं न कि विधान बनाने वाली संस्था के रूप में। मैं निवेदन करता हूं कि प्रस्ताव जैसा मैंने पेश किया है सभा द्वारा स्वीकार किया जायेगा।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। प्रस्ताव न पढ़ा गया है न पेश किया गया है।

***श्री के.एम. मुन्शी:** मैं उसे अवश्य पढूंगा। इस ओर मेरा ध्यान आकर्षित करने के लिये मैं माननीय सदस्य का बहुत आभारी हूं और मैं समझ गया हूं। मेरा प्रस्ताव इस प्रकार है कि:

''विधान-परिषद् की कार्यवाही सम्बन्धी रिपोर्ट पर विचार करने के सम्बन्ध में माननीय डा. बी. आर. अम्बेडकर के प्रस्ताव के सिलसिले में यह निश्चय किया जाता है कि:

(1) परिषद् का कर्तव्य होगा:

(क) विधान बनाने के कार्य को प्रचलित रखना तथा समाप्त करना, जो कि 9 दिसम्बर सन् 1946 ई. को आरम्भ किया गया था; और

(ख) संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करना, जब तक कि नये विधान के अनुसार व्यवस्थापिका न बने।

(2) विधान बनाने वाली संस्था के रूप में परिषद् के कार्य में तथा संघ-व्यवस्थापिका के रूप में उसके साधारण कार्य में स्पष्ट अन्तर रख देना चाहिये और इन दो प्रकार के कार्यों के लिये अलग-अलग दिन या एक ही दिन अलग-अगल सभायें नियत की जायें।

(3) परिषद् में भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों की स्थिति के सम्बन्ध में रिपोर्ट के पैरा (6) में की गई सिफारिशों को स्वीकार किया जाये।''

[श्री के.एम. मुंशी]

रिपोर्ट के पैरा (6) को मैंने शामिल कर लिया है। उस पैरे का प्रयोगनीय भाग इस प्रकार है:

''हम सहमत हैं, जैसा कि इस विचारणीय विषय के शब्दों में निहित है, कि भारतीय रियासतों का प्रतिनिधित्व करने वाले परिषद् के सदस्यों को विधान-परिषद् की विधान बनाने के कार्य के लिये नियत किये गये सब दिनों की कार्यवाहियों में भाग लेने का अधिकार है। उनको उन दिनों की कार्यवाहियों में जो उन विषयों से सम्बन्धित है जिनको रियासतों ने संघ को अर्पित कर दिया है परिषद् में, जो कि संघ व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करेगी, भाग लेने का भी अधिकार है। यद्यपि यह विधान-परिषद् के अधिकार की बात है कि वह उनको उन विषयों से सम्बन्धित कार्यवाही में जिनको रियासतों ने अर्पण नहीं किया है भाग लेने से रोक दे या उसको सीमित करे, हम यह सिफारिश करते हैं कि ऐसी कार्यवाहियों में भी भाग लेने में नियम द्वारा कोई प्रतिबन्ध या रोक न लगा दी जाये।

(4) परिषद् के विचार-विमर्शों पर, जब कि वह संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे, अध्यक्ष का कार्य करने को एक अफसर, जिसको स्पीकर कहा जाये, के निर्वाचन के लिये यह विधान-परिषद् अपने नियमों में उपयुक्त व्यवस्था बनाये।

(5) परिषद् को संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करने के लिये बुलाने तथा समाप्त करने का अधिकार अध्यक्ष को हो।

(6) संघ-सरकार के मंत्रियों को, जो कि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं विधान-निर्माण कार्य में उपस्थित होने तथा भाग लेने का अधिकार होगा, लेकिन जब तक कि वे विधान-परिषद् के सदस्य न हों उनका वोट देने का कोई अधिकार नहीं होगा।

(7) आवश्यक परिवर्तन, संशोधन तथा वृद्धि की जाये:

(क) भारतीय व्यवस्थापिका की स्थायी आज्ञाओं तथा उसके नियमों में विधान-परिषद् के अध्यक्ष द्वारा, उनको (आज्ञाओं तथा

नियमों को) जिस रूप में भारतीय सरकार के एक्ट की प्रयुक्त व्यवस्थाओं को भारतीय स्वतंत्रता एक्ट 1947 के अन्तर्गत संशोधन कर ग्रहण किया है उसके अनुरूप बनाने के लिये।

(ख) विधान-परिषद् या अध्यक्ष द्वारा जैसी भी सूरत हो उन नियमों तथा स्थायी आज्ञाओं में पैरा 9 की व्यवस्थाओं का पालन करने के लिए और जहां आवश्यक हो भारतीय सरकार की प्रयुक्त धारा को नए नियम के अनुरूप बनाने के लिए उचित संशोधन करने के लिए।''

इस सिलसिले में मैं एक बात कह दूं जिसका कहना मैं आरंभ में भूल गया था। मेरे पेश किये संशोधन में तथा रिपोर्ट में परिषद् को बुलाने तथा समाप्त करने का अधिकार अध्यक्ष को सौंपा गया है। जैसा कि कहा जा चुका है भारतीय सरकार के एक्ट के अंतर्गत अभी यह गवर्नर का अधिकार है। उसका आशय गवर्नर जनरल से है जैसा कि प्रधान मंत्री की राय द्वारा है। परन्तु समूची विधान-परिषद् का हमारा कानून-निर्माण का कार्य एकमात्र स्वरूप होने के कारण यह आवश्यक है कि विधान-परिषद् गवर्नर जनरल से मुक्त रहे। इसलिए विचारा गया कि अध्यक्ष ही व्यवस्थापिका को बुलाने तथा उसे समाप्त करने के लिए उपयुक्त व्यक्ति होगा।

केवल ये ही वे सब बातें हैं जो मुझे कहनी हैं और मैं आशा करता हूं कि सभा इसे स्वीकार करेगी।

***अध्यक्षः** मेरे पास कुछ संशोधनों की सूचना है। मैं देखता हूं कि इनमें से चार संशोधन श्री मुंशी द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव के अंतर्गत आ जाते हैं और इसलिए उनको पेश करने की आवश्यकता नहीं है। दो ऐसे संशोधन हैं जिनकी मेरे पास सूचना है, और वे श्री मुंशी के प्रस्ताव के अंतर्गत नहीं आते हैं, एक संशोधन श्री अनन्तशयनम् आयंगर द्वारा है और दूसरा श्री टी. टी. कृष्णमाचारी द्वारा।

(श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर ने अपना संशोधन पेश नहीं किया।)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रासः जनरल): श्रीमान् जी, मैं संशोधन पेश नहीं कर रहा हूं, परन्तु सभा के समक्ष प्रस्ताव पर मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा।

***अध्यक्षः** और कोई संशोधन नहीं है। प्रस्ताव पर अब वाद-विवाद हो सकता है। आप अब बोल सकते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, डा. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये इस प्रस्ताव तथा श्री मुंशी के संशोधन पर बोलने से मेरा उद्देश्य कुछ प्रश्नों को स्पष्ट कराने से है, क्योंकि ये बातें इस रूप में हैं कि कोई व्यक्ति विरोधी प्रस्तावों की भूल भुलैयों में पड़ सकता है। पहला प्रश्न जिस पर मैं सभा का ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा वह श्री मुंशी के संशोधन के वाक्यखंड (1) की उपधारा (6) के सम्बंध में है। माननीय डा. अम्बेडकर ने मुख्य प्रस्ताव को पेश करते समय इस बात की ओर ध्यान आकर्षित किया कि रिपोर्ट ने भारतीय सरकार के एक्ट की धारा (10) की उपधारा (2) को स्वीकार किया है जिसके द्वारा सरकारी सदस्यों को जो इस परिषद् के सदस्य नहीं हैं कार्यवाही में भाग लेने का अधिकार दिया है। इसको फिर उस प्रस्ताव में दुहराया गया है जो कि मुख्य प्रस्ताव के संशोधन के रूप में पेश किया गया है। श्रीमान् जी, मैं यह जानना चाहूंगा कि जो परिमितितायें भारतीय सरकार के एक्ट की धारा (10) की उपधारा (2) में है; कि वे सरकारी सदस्य सरकारी सदस्य भी बने रह सकते हैं और केवल 6 महीने के लिए, इससे अधिक नहीं, भाग ले सकते हैं और इस काल में उनको परिषद् का सदस्य बन कर योग्यता प्राप्त कर लेनी चाहिये; वे वर्तमान सरकार के सदस्यों पर लागू होंगी या नहीं। यह प्रश्न है जिसको मैं चाहूंगा कि डा. अम्बेडकर या श्री मुंशी स्पष्ट करें।

दूसरा प्रश्न जिसे मैं कहना चाहूंगा वह उस अफसर के नाम के सम्बन्ध में है जिसको संघ-व्यवस्थापिका में अध्यक्षता करने के लिए सुझाया गया है। मुझे भय है कि भारत के सरकारी एक्ट के संशोधन तथा श्री मुंशी के कथन में कुछ विरोध है। भारत के सरकारी एक्ट का संशोधन धारा 22 पर उग्र रूप में विचार करता है, जो कि 1935 एक्ट के अंतर्गत व्यवस्थापिका पर अध्यक्षता करने वाले अफसर के संबंध में है। इस धारा की (1), (2), (3) और (5) उपधारायें छोड़ दी गई हैं और उपधारा (4) अपने मूल रूप में इस प्रकार है:

"राज्य-परिषद् के अध्यक्ष अथवा उपाध्यक्ष को क्रमशः उतना वेतन दिया जायेगा जितना संघ-व्यवस्थापिका के एक्ट द्वारा नियत किया जाये और जब तक इस प्रकार की व्यवस्था न बने तब तक उतना वेतन दिया जायेगा जितना गवर्नर जनरल निश्चित करें।"

संशोधन केवल यह है कि उपधारा (4) में ''राज्य-परिषद् के'' के स्थान में ''संघ-व्यवस्थापिका के'' हो तथा ''अथवा उपाध्यक्ष'' को निकाल दिया जाये। अत: जहां तक उपधारा (4) का सम्बंध है व्यवस्था लगभग वैसी ही रहती है, सिवाय व्यवस्थापिकाओं के नाम के परिवर्तन के, तथा ''राज्य-परिषद्'' और ''नीचे की सभा'' शब्दों को हटाने के तथा ''संघ-व्यवस्थापिका'' शब्दों के रखने के। अत: जब कि पूरी योजना बदल दी गई और भारत सरकार के एक्ट की धारा (22) तथा धारा (23) में से ''स्पीकर'' शब्द निकाल दिया गया तो मैं नहीं समझता कि ''स्पीकर'' शब्द का यहां रखना बिल्कुल ठीक और कानूनी है। संभवतया मूल रिपोर्ट के शब्दों को ग्रहण करना अच्छा होता, अर्थात् ''एक अफसर अध्यक्षता करने के लिये,'' उसका चाहे बाद में कुछ भी नाम हो जाये।

तीसरा विषय जिसका मैं स्पष्टीकरण चाहूंगा वह यह है। वह वाक्यखंड (1) का उप-खंड (5) है। इस उप-खंड में जो स्थिति ग्रहण की गई है वह हमारे विचार से बिल्कुल ठीक है, क्योंकि यह सर्वोच्च संस्था है जिसे अपने कार्य-पद्धति के नियम बनाने तथा अफसर नियुक्त करने का अधिकार है। लेकिन जब तक भारत सरकार के एक्ट के, जिसका हमने व्यवस्थापिका के रूप में संशोधन किया है, अंतर्गत कार्य करेंगे तो उसमें ही कुछ और संशोधन क्यों न किये जायें और उसको इस प्रकार क्यों न बना दिया जाये कि परिषद् को बुलाने तथा समाप्त करने का अधिकार गवर्नर जनरल को नहीं होगा वे अधिकार अध्यक्ष को सौंप दिये जायेंगे? मैं नहीं समझता हूं कि इस प्रकार के संशोधन करने में कोई कानूनी रुकावट है। जैसा कि मैंने आरंभ में कह दिया था कि मुझे समझा दिया जाये, परन्तु मैं विचार करता हूं कि इस स्थिति को उचित कानून बनाने की कार्यवाही द्वारा उपयुक्त रूप में पुष्ट किया जा सकता था, अपेक्षाकृत उस पर किसी प्रस्ताव तथा संशोधन द्वारा या संशोधनकर्ता की व्याख्या द्वारा।

श्रीमान् जी, एक और विषय भी है जिसको मैं यहां कहना चाहूंगा, जो संशोधन के सम्बंध का है और जिसकी मैं सूचना दे चुका हूं। वह यह है। हम अनेकों नियमों के विरोध पर विचार कर रहे हैं, क्योंकि जिस स्थिति में हम अब हैं वह हमारी बनाई हुई नहीं है। हमारे देश में तीव्र गति से परिवर्तन होने के कारण अनेकों बातें पैदा हो गई हैं और हम को यथासंभव उत्तम प्रकार से उनको सुलझाना है। ऐसी परिस्थितियों में व्यक्ति-विशेषों का विचार किये बिना मैं यह उत्तम समझता हूं श्रीमान् जी, कि विधान-परिषद् के दो कार्यों पर अध्यक्ष अफसरों के कार्य-क्षेत्र की स्पष्ट व्याख्या कर दी जाये और इसीलिए मैं चाहता हूं कि श्री मुंशी अपने संशोधन के प्रस्ताव द्वारा कमेटी की रिपोर्ट के पैरा (6) में वे शब्द लाते जो

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

यह स्पष्ट कहते–यह स्मरण रखा जाये कि दो प्रकार के कार्य करते हुए भी परिषद् एक है और केवल एक ही अध्यक्ष रख सकती है और यह कि अध्यक्ष उसका सर्वोच्च मुखिया होना चाहिये, दोनों शासन व्यवस्था के कार्यों में तथा विचार-विमर्श के कार्यों में। मैं सभा को तुरंत यह विश्वास दिला सकता हूं कि अध्यक्ष के कार्यों की तथा किसी उस अफसर के कार्यों के तदनुसार निश्चय की, जिसे अध्यक्ष या सभा नियुक्त करे, यह विशेष स्पष्ट तथा सही व्याख्या की सभा को सूचना देते हुए मेरी किसी व्यक्ति को अतिरिक्त अधिकार देने तथा किसी अन्य से अधिकार छीनने की मंशा नहीं है। मैं केवल यह अनुभव करता हूं कि जब हम ऐसी परिस्थितियों पर विचार कर रहे हैं जिन पर हमारा नियंत्रण नहीं है तो उस काम को करने के लिए जिसे हमें करना ही है हम अच्छे से अच्छा प्रयत्न कर रहे हैं। हम यहां और अभी सही व्याख्या रखें जिससे कि बाद में, चाहे कुछ भी हो, यदि दैवयोग से कोई झगड़ा ही हो तो यह स्पष्ट विदित हो जायेगा कि सबसे बड़ा अधिकारी कौन है। मैं चाहता हूं कि श्री मुंशी प्रस्ताव के संशोधन में इस विचार को रखते। हमारे प्रयोजन के लिए यह पर्याप्त है कि प्रस्तावक यह स्वीकार कर लें कि कमेटी की रिपोर्ट के शब्द ठीक हैं और इस पेश किये गये प्रस्ताव के संशोधन द्वारा भी वे नहीं बदले जा सकते। मेरे विचार से यह आश्वासन आशय की पूर्ति करेगा। तत्पश्चात् यह परिषद् संघ-व्यवस्थापिका के रूप में विशेष कार्य करेगी, जब तक कि नया विधान प्रयोग में नहीं आता और अध्यक्षता करने वाले अफसर के अधिकार तथा स्थिति में भी अन्य परिवर्तन होंगे। परन्तु कुछ समय के लिए मेरे विचार से उसके कार्य क्षेत्र की सही व्याख्या और इस बात पर जोर देते हुए कि विधान-परिषद् का अध्यक्ष ही बावजूद इस बात के कि वे सभा की स्वीकृति से कुछ अधिकार अन्य व्यक्ति को देते हैं, अब भी सर्वोच्च मुखिया हैं दोनों सभा के शासन-व्यवस्था-सम्बंधी तथा विचार-विमर्श सम्बंधी विभागों में। इससे सदस्यों के मन का भय तथा शंकाओं का निवारण हो जायेगा। मैं यह भी आशा करता हूं कि डा. अम्बेडकर या श्री मुंशी उन शंकाओं का समाधान करेंगे जिनको मैंने श्री मुंशी द्वारा पेश किये गये संशोधन के वाक्यखंड (1) के मद (4) तथा (6) पर उठाया है।

***श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, मैं एक वैधानिक आपत्ति रखने के लिये खड़ा होता हूं। वह यह है। जब कभी विचार के लिये सभा के समक्ष रिपोर्ट लाई जाती है तो सभा का निश्चय उस प्रस्ताव पर किया जाता है और फिर एक-एक करके वाक्य-खंड लिये जाते हैं। अब जो कुछ हुआ है, वह

यह है कि प्रस्ताव अभी अनिश्चित है और सदस्यों को अपने संशोधन पेश करने की आज्ञा दे दी गई है, और फिर भी जो संशोधन श्री के. एम. मुंशी द्वारा पेश किया गया है वह इतना व्यापक है और इतने विषयों का समावेश करता है कि इस पर वाद-विवाद तक करना सदस्यों के लिये बड़ा कठिन है। मैं यह सुझाव रखूंगा कि पहले जो संशोधन माननीय डा. अम्बेडकर ने पेश किया है, उस पर विचार करने का निर्णय किया जाये और फिर श्री मुँशी के संशोधन के अंतर्गत एक-एक बात को अलग-अलग वाद-विवाद के लिये लिया जाये और निश्चय किया जाये। यह मेरी वैधानिक आपत्ति है।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से जो वैधानिक आपत्ति इस समय उठाई गई है वह पहले भी उठाई गई थी और उस समय सामान्यतः सभा की ऐसी इच्छा पाई गई थी कि दो संशोधनों के रखने से, जिनमें एक प्रस्ताव पर विचार करने सम्बंधी हैं और दूसरा विवरण-सम्बंधी, श्री मुंशी का प्रस्ताव है, कोई विशेष लाभ नहीं होगा। इसलिये मैंने दोनों को एक साथ ले लेने दिया। दोनों पर अब वाद-विवाद हो सकता है और सदस्यों को उस प्रस्ताव पर जो पेश किया गया है, जिसमें कि रिपोर्ट में दी हुई सब बातें हैं, बोलने की स्वतंत्रता है।

***डा. पी.एस. देशमुखः** अध्यक्ष महोदय, मैं यहां तक तो नहीं कहूंगा कि रिपोर्ट तथा रिपोर्ट पर प्रस्तावित निर्णय का समावेश करते हुये प्रस्तावित को रखने से जो परिस्थिति उत्पन्न हो गई है वह गड़बड़ी पैदा करने वाली परिस्थिति है, जैसे कि पूर्व-वक्ता श्री कृष्णमाचारी ने कहा है। परन्तु, श्रीमान् जी, मैं यह कहूंगा कि मेरा यह विचार है कि रिपोर्ट बहुत संतोषजनक नहीं है। यदि हम रिपोर्ट की बातों का विश्लेषण करें तो मैं समझता हूं कि यदि सब नहीं तो अनेकों सदस्य मेरे साथ इस बात में सहमत होंगे कि रिपोर्ट में वे बातें हैं जो कि स्पष्ट प्रत्यक्ष हैं और जो किसी भी व्यक्ति के लिये केवल सामान्यबुद्धि के विषय हैं। दूसरे रिपोर्ट में कुछ वैकल्पिक प्रस्ताव हैं। उदाहरण के रूप में, उसमें दिया हुआ है कि आप जैसा चाहें एक अध्यक्ष रख सकते हैं अथवा दो। श्रीमान् जी, विकल्प के उपस्थित करने से कोई लाभ नहीं है। ऐसी कमेटियों से जो आशा की जाती है वह यह है कि वे हमारा उचित पथ-प्रदर्शन करें। यह स्पष्ट है कि कमेटी ऐसा नहीं कर सकी है। तीसरे डा. अम्बेडकर को स्वयं यह स्वीकार करना पड़ा कि दो ऐसे मद हैं जिन पर वे अन्तिम निर्णय नहीं कर सके। चौथे, डा. अम्बेडकर के भाषण से यह स्पष्ट है कि उन्होंने तर्क अथवा जो राजनैतिक-सा था उस पर अधिक विश्वास किया, अपेक्षाकृत सभा को ऐसे आदेश देने के जो न्याययुक्त

[डा. पी.एस. देशमुख]

तथा वैधानिक हों। रियासतों के प्रतिनिधियों से सम्बन्धित सिफारिश का हवाला देता हूं। यह स्मरण रखा जाये कि हमारा रियासत के प्रतिनिधियों से कोई झगड़ा नहीं है, चाहे वे यहां शासकों की ओर से आये हों चाहे प्रजा की ओर से। मैं उनका स्वागत करता हूं; मैं यह चाहूंगा कि वे वास्तव में हमारे समान हों और उनको वे समस्त सुविधायें तथा अधिकार मिलें जो भारत के अन्य भाग से आये हुये हम लोगों में से किसी को मिलते हैं। लेकिन मैं इसमें भी विश्वास करता हूं कि कमेटी का यह कर्तव्य था कि वह हमको यह बताती कि रियासतों से आये हुये इस सभा में उपस्थित व्यक्तियों के अधिकारों के प्रयोग करने के सम्बन्ध में कानूनी स्थिति क्या है। हमें यह बताना यथेष्ट नहीं था कि क्या तर्क-सम्मत है तथा क्या राजनैतिक है। उस विवेक को हम सब प्रयोग में ला सकते हैं और लायेंगे। वास्तव में हम जिस आदेश को चाहते थे वह यह था कि क्या वैधानिक है तथा क्या न्याययुक्त है और अन्त में अपने प्रस्ताव के औचित्य के सम्बन्ध में एक दो वाक्य होते। मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि कमेटी के किसी विशेष सदस्य को अप्रसन्न करने का मेरा आशय नहीं है, डाक्टर अम्बेडकर को तो किसी रूप में भी नहीं। परन्तु इस सभा में ऐसे सदस्यों की पर्याप्त संख्या है जो हमारी अनेक समितियों के कार्य की इन्हीं शब्दों में समालोचना करते हैं, जिनका इस विशेष समिति की रिपोर्ट के सिलसिले में मुझे प्रयोग करना पड़ा है। और यही कारण है कि कम से कम कुछ समितियों से समय-समय पर जो हमें रिपोर्टें प्राप्त होती रही हैं, उनसे वे सन्तुष्ट नहीं हो पाये हैं।

यहां तक कि श्रीमान् जी, मेरे विचार से इस प्रकार की आशा करना व्यर्थ है कि हमें इस रिपोर्ट पर विचार करने के लिये आप अधिक समय देंगे या और आगे विचार करने के लिये उसी कमेटी को यह रिपोर्ट वापस कर देंगे। इस प्रकार की आशा करना आवश्यकता से अधिक है। एक यथेष्ट दीर्घकाल तक राजनीति तथा व्यवस्थापिका में रहने से मुझे यह विदित है कि सद्भावना सदैव नहीं रहा करती। अतः आपसे ऐसा निवेदन नहीं कर रहा हूं कि कमेटी की रिपोर्ट अस्वीकार की जाये अथवा वापस की जाये। जो कुछ मैं बताना चाहता हूं वह केवल यह है कि जो कुछ हमारे समक्ष प्रस्तुत है वह संतोषजनक नहीं है। हमको उस आधार पर आदेश नहीं दिये गये तथा पथ-प्रदर्शन नहीं कराया गया जिस पर कि हमें निर्देश प्राप्त होना चाहिये था और इस कारण सारी परिस्थिति बहुत असन्तोषजनक है। मैं केवल एक दो बातें ही लूंगा। मुझे बहुत प्रसन्नता हुई कि श्री कृष्णमाचारी ने एक आवश्यक भाषण दिया और श्री मुन्शी द्वारा प्रेषित प्रस्ताव में एक बहुत

प्रमुख दोष बताया। वास्तव में मुख्य उद्देश्य तथा मुख्य बात, जिसके ऊपर कमेटी के सदस्यों को स्वयं ध्यान देना था, यह थी कि जो संशोधन हमारे पीछे किये गये थे उनका क्या फल होगा। केवल एक या दो संशोधनों का उल्लेख किया गया है। लेकिन वह सब पहले ही किया जा चुका है। हमने इच्छा के अनुसार भारत सरकार के एक्ट में परिवर्तन किये हैं, ईश्वर जानता है, किसकी सुविधाचातुरी अथवा किसके आदेश के अनुसार। हमारे पास कुछ तैयार निर्णय हैं और इस रिपोर्ट तथा इस प्रस्ताव के द्वारा हम उनको कुछ स्थानों में जड़ने में प्रयत्न कर रहे हैं। वास्तविक रूप में हमारे सामने कम से कम दो निश्चित बातें हैं। यद्यपि हमको व्यवस्थापिका के अधिकार दे दिये गये हैं और संघ-व्यवस्थापिका कही जाती है, परन्तु 1935 ई. के एक्ट के संशोधन-कर्ताओं ने स्पीकर को हटा दिया है, स्पीकर के निर्वाचन सम्बन्धी धारा को हटा दिया है। दूसरी बात यह है कि हम सबमें इस प्रश्न पर हलचल मची हुई है कि विभिन्न प्रान्त के व्यवस्थापिका सदस्यों को दोनों व्यवस्थापिका तथा विधान-परिषद् के पूर्णाधिकार प्राप्त सदस्यों के रूप में यहां बैठना चाहिये कि नहीं। स्थिति यह है कि वह व्यवस्था जिसके द्वारा एक व्यक्ति दो व्यवस्थापिकाओं का सदस्य नहीं हो सकता था 1935 ई. के एक्ट से शान्तिपूर्वक निकाल दी गई है और वह इस सभा में लागू हो चुकी है। हमारा इससे कोई झगड़ा नहीं है, हम काम चलाना चाहते हैं। मैं इस बात को केवल यह बताने के लिये कह रहा हूं कि स्थिति असन्तोषजनक है। मैं किसी धारा में परिवर्तन अथवा संशोधन करने के अधिकार पर प्रश्न नहीं करता हूं परन्तु सारी स्थिति यथेष्ट रूप से स्पष्ट नहीं है तथा इस प्रकार की नहीं है कि सदस्य किसी विशेष विषय को समझ सकें। वास्तव में जब कोई बात सोची जाती है और प्रस्ताव पेश किया जाता है तो चाहे वह कैसी ही दशा में हो हमें उसका समर्थन करना पड़ता है, और हम निर्णय करने तथा विधान बनाने के लिये इतने चिन्तित रहते हैं कि हम इस बात का भी ध्यान नहीं करते कि वह किस गड़बड़ की अथवा असन्तोषजनक हालत में है। परन्तु इसके साथ-साथ आलोचना के रूप में अभी यह निवेदन करना चाहता हूं कि यह बहुत सुखदायक स्थिति नहीं है, और यदि यह सम्भव हो सके कि आप अथवा प्रस्तावक महोदय या संशोधनकर्ता हमारी शिकायत पर ध्यान दें और कम से कम आंशिक रूप में उसको दूर कर सकें तो मैं आभारी होऊंगा और मुझे विश्वास है कि सभा के अन्य अनेक सदस्य भी आभारी होंगे।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान् जी, श्री मुन्शी द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव पर मेरा कुछ थोड़ा सा झगड़ा है, परन्तु मैं यह स्पष्ट स्वीकार करता हूं कि जो रिपोर्ट हमें दी गई है उससे मैं प्रसन्न नहीं हूं। रिपोर्ट संशोधनों का समर्थन

[श्री विश्वनाथ दास]

करती हुई प्रतीत होती है जिसका मुझे भय है कि इस सभा के बहुत कम सदस्य समर्थन करेंगे। दोनों रिपोर्ट तथा श्री मुन्शी का प्रस्ताव इस आधार पर आश्रित हैं कि विधान-परिषद् को, जो कि इस माह की 15 तारीख से संघ-पार्लियामेंट हो गई है उसे, बिल्कुल भिन्न-भिन्न दो रूपों में कार्य करना है; अर्थात् विधान-परिषद् तथा संघ-पार्लियामेंट के रूप में। इस स्थिति को ग्रहण करने पर अर्थात् पूर्ण पृथक्त्व की स्थिति को, उन्हें आवश्यक रूप से उसी मार्ग का अपनी समस्त योजना में अनुसरण करना है और यहीं पर विधियों का पृथक् होना उपस्थित होता है। भारतीय स्वतंत्रता एक्ट सन् 1947 का अध्ययन यह प्रकट करता है कि विधान-परिषद् इस देश की सर्वोच्च व्यवस्थापिका है। यह स्थिति है जिसे विधान-परिषद् ने स्वीकार कर लिया है, और यदि विधान-परिषद् ने नहीं तो कम से कम हमारे नेताओं ने तो इसे स्वीकार कर ही लिया है और विधान-परिषद् 14 अगस्त से इसका साथ दे रही है। इस विधान-परिषद् ने भारतीय स्वतंत्रता एक्ट को स्वीकार कर लिया है, अपना नेता चुन लिया है और अपने नेता को अधिकार दे दिया है कि वह जाये और लार्ड माउण्टबैटन को भारत का गवर्नर-जनरल होने के लिये आमन्त्रित करे। इस प्रश्न पर इस दृष्टिकोण से विचार करने पर विधान-परिषद् ने उस स्थिति को ग्रहण कर लिया है जो उसे भारतीय स्वतंत्रता एक्ट सन् 1947 ई. के द्वारा दी गई थी। अतः आज इतने समय बाद यह कहने से कोई लाभ नहीं है कि हम दो विभिन्न संस्थाओं के रूप में कार्य करते हैं और हम पृथक्-पृथक् कार्य करते हैं और पूर्णतया पृथक्-पृथक् उद्देश्यों के लिये काम करते हैं। उद्देश्य एक ही है; और जब कि एक ओर हमें भारत के भावी विधान के लिये बिल बनाना है और उसे एक्ट के रूप में पास करना है, हमें देश की दिन प्रतिदिन की शासन-व्यवस्था की भी देखभाल करनी है और ऐसे कानून-निर्माण कार्य को भी अपने हाथों में लेना है जो कि आवश्यक हो। अतः कमेटी का दो रूप में कार्य करने का प्रस्ताव और मेरे माननीय मित्र मुन्शी का, सभा की खामोश स्वीकृति देने वाला प्रस्ताव भी हमारे द्वारा स्वीकृत नहीं किया जा सकता। यहां मेरी शिकायत है। यदि हम एक बार इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लें तो इसका आशय होगा कि दो-कार्यालय होंगे और हमें विधान-परिषद् के कार्यालय का वही अनुभव होगा जिसके कार्यकर्त्ता न तो कुशल हैं और न विनयशील हैं। उनको विनम्रता तथा व्यवहार-कुशलता की कुछ शिक्षा प्राप्त करनी चाहिये।

***एक माननीय सदस्यः** क्या आप इसे सिद्ध कर सकते हैं?

***श्री विश्वनाथ दासः** हां, यदि आवश्यक हो तो मैं उदाहरण दे सकता हूं। एक माननीय सदस्य ने उनकी अयोग्यता के बाबत कहा था। मैं यह कहूंगा कि विधान-परिषद् का कार्यालय कुशल नहीं है। इन परिस्थितियों में ये तो केवल अतिरिक्त तर्क हैं कि हम इन दो कार्यों को दो रूप में क्यों ले सकते हैं। यदि हम विधान बनाने का कार्य अन्य दिनों में करें, जिससे मैं पूर्णतया सहमत हूं, तो यह इस कारण नहीं है कि हम भिन्न-भिन्न हैं, वरन् कार्य करने की सुविधा के कारण। दूसरे उदाहरण को उद्धृत करते हुये हम उच्च न्यायालय (हाईकोर्ट) में कार्य-व्यवस्था को लें। वहां दीवानी विषय एक दिन लाये जाते हैं तथा फौजदारी विषय अन्य दिनों तथा इसी प्रकार। इसी प्रकार यह अकेली संस्था विधान निर्माण कार्य को किन्हीं निश्चित दिनों में ले लेगी तथा सामान्य व्यवस्था सम्बन्धी कार्य को अन्य दिनों।

***श्री एच.वी. कामतः** माइक खराब हो गया है।

***श्री विश्वनाथ दासः** यह अपनी-अपनी राय का विषय है (*हंसी*)

***कुछ माननीय सदस्यः** माइक ठीक नहीं है।

***श्री विश्वनाथ दासः** मुझे बहुत खेद है। मैं जोर से बोलूंगा। ऐसी स्थिति में मैं अनुभव करता हूं कि समय आ गया है जबकि थोड़ा सा स्पष्ट कहना आवश्यक है और हमें यह बहुत स्पष्ट कर देना है कि हम एकमात्र एक व्यवस्थापिका के रूप में यहां काम करते हैं, किसी भिन्न आशय के लिये नहीं केवल अपनी कार्यवाही को सुविधापूर्वक चलाने के लिये। केवल यहीं तक मैं समिति से सहमत हूं कि हम विधान बनाने के लिये और दिन नियत करें तथा सामान्य कानून बनाने के लिये और, अन्य बातों तथा प्रबन्ध सम्बन्धी कार्यों पर वाद-विवाद करने के लिये कोई अन्य दिन या उसी दिन कोई अन्य समय नियत करें। ऐसी स्थिति में मैं सुझाव रखता हूं कि यह दुहरी कार्यवाही समाप्त होनी चाहिये।

***अध्यक्षः** मुझे भय है कि करेंट कट गई है और इस कारण माइक कार्य नहीं कर रहा है। मैं मान लेता हूं कि वक्ता महोदय इतनी जोर से बोलेंगे कि अन्य सदस्यों को सुनाई दे।

***श्री विश्वनाथ दासः** जी हां। इसे समाप्त करने के पश्चात् मैं दूसरे विषय पर आता हूं, जिस पर मैं सभा के माननीय सदस्यों को व्याख्यान देना चाहता हूं और वह विषय संशोधनों का है। श्रीमान् जी, इस सभा के माननीय सदस्यों से परामर्श किये बिना ही संशोधन कर दिये गये हैं तथा महत्वपूर्ण परिवर्तन कर दिये

[श्री विश्वनाथ दास]

गये हैं, जिस पर मैं यहां विरोध करूंगा। मैं अपने विषय को स्पष्ट करूं। हम यहां विधान-परिषद् में एक अधिवेशन के लिये एकत्रित हुये हैं। हमारे लिये एक अधिवेशन के अतिरिक्त अन्य कोई अधिवेशन नहीं है, अर्थात् कि हम आरम्भ करें और जब तथा जिस रूप में हम निर्णय कर लेते हैं हम समाप्त करें। हमारे राजा इस विषय में बहुत स्पष्ट हैं। यदि हम बार-बार स्थगित करते हैं तो यह हमारी अपनी सुविधा तथा अपनी कार्यवाही को सुविधापूर्वक समाप्त करने के लिये हैं। लेकिन यह बात तो है ही कि विधान-परिषद् एकमात्र संस्था के रूप में कार्य करेगी जब तक उसका मुख्य कार्य समाप्त न हो जाये, अर्थात् विधान का तैयार करना और उसे पास करना। श्रीमान् जी, उन नियमों को देखकर पार्लियामेंट का एक्ट बनाया गया है जिसका यह आशय है कि वह स्वीकार कर लिया गया। अत: स्थिति यह है कि विधान-परिषद् जब तक बैठे, एक वर्ष, दो वर्ष या 6 महीने वह सारा एक अधिवेशन होगा। इस स्थिति में मैं जोरदारी के साथ संशोधनों का विरोध करता हूं, जिसमें यह निर्धारित किया गया है कि पार्लियामेंट के अधिवेशनों में बैठने तथा उसकी कार्यवाही के लिये गवर्नर-जनरल हमें बुलायेंगे। उनका इससे कोई सम्बन्ध नहीं है, उनको कोई काम नहीं है। हम विधान-परिषद् के सदस्य हैं और विधान-परिषद् अपनी मर्जी से बैठती है तथा स्थगित होती है। हम उसके कार्यों को गवर्नर-जनरल को नहीं सौंप सकते, चाहे हम उनको कितना ही प्रेम करें, चाहें या उनका आदर करें। न हम इस महत्वपूर्ण कर्तव्य को माननीय अध्यक्ष को सौंपना चाहते हैं यद्यपि हम उन्हें प्रेम करते हैं, उन्हें चाहते हैं और उनका सम्मान करते हैं। श्रीमान् जी, यह संशोधन बहुत बुरा है और मेरे विचार से यह उचित है कि हम उसका विरोध करें।

इसके बाद मैं समाप्त करने पर आता हूं। हम सम्मिलित होते हैं और हम स्वयं ही समाप्त करेंगे। पृथ्वी की कोई शक्ति तथा अधिकारी हमसे इस परिषद् को समाप्त नहीं करा सकते हैं और हम इस कार्य को किसी अधिकारी को नहीं सौंप सकते, सिवाय स्वयं विधान-परिषद् के। इस विषय पर मैं संशोधन को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं हूं। मैंने अभी कुछ थोड़ी सी बातों को लिया है, पर ऐसे अनेको मद हैं जिन पर संशोधनों की आवश्यकता नहीं है और न वे हमारे लिये उचित ही हैं।

अब मैं तीसरे विषय पर आता हूं, रियासतों का भाग लेना। मेरे माननीय मित्रों, इस समिति के सदस्यों ने हमसे यह सिफारिश की है कि रियासतों के प्रतिनिधि हमारे साथ रहने चाहियें। हम उनको यहां रखने के लिये उद्यत हैं। परन्तु, क्या

उनका यह प्रस्ताव है कि वे हमारे विचार-विमर्शों तथा वाद-विवादों में ही केवल भाग न लें वरन् वोट देने के विषय में भी? मैं यह स्पष्ट स्वीकार करूंगा कि मुझे जितना समय दिया गया है उससे अधिक समय इस प्रश्न पर विचार करने के लिये चाहिये। जहां तक रियासत के प्रतिनिधियों का सम्बन्ध है, वे 62 हैं—व्यवस्थापिका की संख्या की एक अच्छी भिन्न। हमारे लिये बिना और विचार किये इससे सहमत होना बहुत कठिन होगा कि इस विधान-परिषद् के 62 सदस्यों को अपने साथ बजट पर भी वोट देने का अधिकार दिया जाये जिसके लिये उन पर कोई उत्तरदायित्व नहीं है, सिवाय तीन विषयों के।

समाप्त करने के पूर्व मैं आपसे इस प्रश्न पर विचार करने का निवेदन करूंगा कि हमारे पास व्यवस्थापिका का कार्यालय है जो दक्ष, निपुण तथा कार्य करने के लिये तत्पर है। इन परिस्थितियों में हम दुहरे कार्यालय क्यों रखें, जिसका आशय व्यर्थ व्यय तथा अयोग्यता से है? इन परिस्थितियों में मैं आपसे निवेदन करूंगा कि आप इस प्रश्न पर व्यय तथा योग्यता को ध्यान में रखते हुये विचार करें।

***माननीय श्री हुसैन इमाम:** अध्यक्ष महोदय, मुझे बहुत खेद है कि हमारे कुछ सहयोगियों ने कमेटी के कार्य पर आपत्ति की है तथा उसका अपवाद किया है। कमेटी के सदस्य की हैसियत से मैं यहां उस दशा को बताने आया हूं जिसमें हमने कार्य किया। हमारे सामने विचारणीय बातों के प्रतिबन्ध थे जो यहां आरम्भ में तय की गई थीं। जो सदस्य अब बुद्धिमान् बन रहे हैं, उन्होंने विचारणीय बातों में किसी परिवर्तन का सुझाव नहीं रखा। लेकिन अब उन सीमित विचारणीय विषयों के अन्तर्गत कार्य कर देने के पश्चात् हमारी दो बातों में समालोचना की जाती है। पहली यह है कि हम अपनी सीमा के बाहर चले गये और दूसरी यह है कि हमने यथेष्ट विचार नहीं किया। ये दो स्वविरोधी अपराध लगाये गये हैं। कमेटी की स्थिति क्या थी? कमेटी कभी अपनी उस उत्पादक संस्था से बड़ी नहीं है, जिसने उसे उत्पन्न किया। उत्पादक संस्था सदैव उच्च है और उसे कमेटी के सुझावों में परिवर्तन अथवा संशोधन करने का अधिकार है। कमेटी अपनी इच्छा पर आग्रह नहीं कर सकती है। वह जो वास्तव में करती है वह यह है कि आपके सामने कार्यवाही की किसी विशेष विधि के समस्त पहलुओं का साकार रूप रखे। यह प्रत्यक्ष है कि विधान-परिषद् की दुहरी कार्यवाही है। इस पर उड़ीसा के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री ने भी आक्षेप किया था कि उसे दुहरी कार्यवाही न रखनी चाहिये यह ऐसी बात है जिसको एक माननीय सदस्य ने प्रत्यक्ष समझा और दूसरे

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

ने गलत समझा। लेकिन स्थिति क्या है? कृपा कर यह याद रखिये कि अब तथा भविष्य के लिये विधान बनाने और आज से लेकर जब तक नया विधान लागू नहीं होता तब तक समस्त शासन-विधान अधिकार आप पर हैं। सभा की यह स्थिति होने के कारण उसे दोनों कार्यों में से किसी की भी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। इस कमेटी की उत्पत्ति इस कारण हुई थी कि यहां एक प्रश्न उठाया गया था कि प्रबंधक सरकार (Executive Government) द्वारा आधुनिक परिस्थितियों में किये गये कार्यों पर प्रश्न उठाने के लिये हमें एक अदालत बनानी चाहिये तथा इस प्रश्न पर वाद-विवाद हुआ था। पंडित जवाहरलाल नेहरू भी उपस्थित थे और अनेकों वक्तव्यों के पश्चात् उन्होंने कहा कि यह अच्छा होगा कि एक कमेटी बैठे और समस्त उलझनों पर विचार करे और साधनों का सुझाव रखे। हम वास्तव में दुहरी कार्यवाहियों को एक ही समय किये जाने के प्रबन्ध की योजना बना रहे थे। ये दो कार्य इतने भिन्न-भिन्न हैं कि उनको पृथक्-पृथक् ही लिया जा सकता है। उदाहरण के लिये विधान-परिषद के रूप में हम अगस्त में बैठ सकते हैं और सितम्बर में व्यवस्थापिका के रूप में। हमारे लिये यह मार्ग खुला हुआ था। दूसरा मार्ग यह था कि हम एक ही अधिवेशन में पृथक्-पृथक् दिन रखते। तीसरा मार्ग यह था कि उसी दिन हम पृथक्-पृथक् समय रखते। इन सब विषयों का हमको हवाला दिया गया था और शुद्ध अन्तःकरण वाले व्यक्ति के समान हमने इन तीनों मार्गों में से किसी को नहीं चुना। हमने आपके सामने तीनों मार्गों को बता दिया है, जो आपके लिये खुले हुये हैं। आप एक ही दिन पृथक्-पृथक् अधिवेशन समय रख सकते हैं, या आप पृथक्-पृथक् दिन रख सकते हैं या आप पृथक्-पृथक् अधिवेशन कर सकते हैं, परन्तु हमने यह बता दिया है कि हम भिन्न-भिन्न समय रखने की अपेक्षा पृथक्-पृथक् बैठक करना पसन्द करते हैं। एक उद्देश्य के लिये आप प्रातःकाल बैठ सकते हैं तथा दूसरे उद्देश्य के लिये सायंकाल को, हमने केवल यही किया है। हमने इसका निर्णय आप पर ही छोड़ दिया है। अच्छा तरीका यह होता कि प्रबन्धक सरकार को, जिस पर सभा का उत्तरदायित्व है, अपने विवेक को काम में लाने दिया जाता और वह हमें व्यवस्थापिका सम्बन्धी कार्यों के लिये समय देती जिस प्रकार कि वह अधिवेशन में गैर सरकारी कामों के लिये समय देती है। एक समय ऐसा आ सकता है जब कि विधान-परिषद् का कार्य इतना कम हो जाये कि उसके लिये सप्ताह में एक दिन ही काफी हो और चार दिन व्यवस्थापिका के कार्यों के लिये दिये जा सकते हैं और दूसरे समय इसके विपरीत हो सकता है। मेरा आशय यह है कि आप विधान-परिषद् का कार्य सप्ताह में चार दिन करते रहें और व्यवस्थापिका का कार्य केवल एक दिन।

अब प्रश्न दुहरे नियंत्रण का उठता है। हमने यह इतने शब्दों में कह दिया है कि अध्यक्ष दोनों विधान-परिषद् तथा व्यवस्थापिका के कार्यों के मुखिया होंगे। अब यह सभा को अधिकार है, कि यदि वह यह समझती है कि विधान-परिषद् के कार्यालय सम्बन्धी कार्य के लिये, जब कि वह व्यवस्थापिका के रूप में कार्य कर रही हो, एक विशेष प्रकार के प्रबन्ध की जरूरत है, तो वह ऐसा नियम बना ले। यदि वह यह समझती है कि दोनों विभागों का मिलाना आवश्यक है तो वह ऐसा भी कर सकती है और यदि वह यह सोचती है कि एक कार्यालय को बरखास्त कर दिया जाये और दूसरे को नियुक्त रखा जाये तो उसे ऐसा करने का भी पूर्ण अधिकार है। कमेटी से क्यों चाहते हैं कि वह एक प्रकार के आरोपण के समान इस भार को क्यों वहन करे, जबकि यह विचारणीय बातों में नहीं है। हम अपनी इच्छा आप पर लादने के लिये समिति में नहीं थे, बल्कि आपको केवल यह बताने के लिये थे कि आपके लिये कौन-कौन से मार्ग हैं और उनमें क्या-क्या उलझने हैं। यह सच है कि हम विचारणीय बातों की सीमा को पार कर गये। ऐसा दो बार हुआ और वह आवश्यक था, क्योंकि हम कुछ बातों के इतने विरोध में थे जो कि यद्यपि विचारणीय बातों के अन्तर्गत नहीं थीं फिर भी हमारे वाद-विवाद के लिये वे इतनी उपयुक्त तथा आवश्यक थीं कि हम उनकी उपेक्षा नहीं कर सके और इस कारण हमने उन विषयों पर कुछ विचार रख दिये हैं। परन्तु हमने यह सावधानी रखी है कि किसी प्रकार हम आप पर अपनी इच्छा का भार न डालें। भारत सरकार के एक्ट की धारा 10 (2) पर जो प्रश्न किया गया है कि उसमें यह व्यवस्था की गई है कि सरकारी सदस्य 6 महीने में व्यवस्थापिका का सदस्य हो जाये या पद त्याग करे, यह भी एक ऐसी धारा है जिसमें आप परिवर्तन कर सकते हैं और यदि प्रबन्धक सरकार यह अनुभव करती है कि परिवर्तन आवश्यक है तो वह उस परिवर्तन को कर सकती है, अथवा यदि वह यह अनुभव करती है कि उनको विधान परिषद् में लाना आवश्यक है तो उन विषयों को उपस्थित करने की भी काफी गुंजाइश है। मैं इसलिये विचार करता हूं कि यह सुझाव रखना कि वाक्यखंडों का कोई संशोधन कार्य में बाधक होगा वास्तव में राई का पर्वत बनाना है। यह समझते हुये कि संशोधन करने में समय लगता है और यह कुछ कठिन भी है। हमने एक अच्छा तरीका सुझाया है कि सर्वोच्च संस्था होने के नाते विधान-परिषद् को अपनी इच्छा के अनुसार नियम बनाने का अधिकार है इस कारण हमने सिफारिश की है कि जिस कार्य को हम आवश्यक तथा तात्कालिक समझते हैं उसे नियम बनाने के अधिकार द्वारा करना चाहिये; उदाहरण के रूप में व्यवस्थापिका बुलाने के कार्य को। इन बातों

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

का सुझाव रखने के अतिरिक्त कि वाक्यखण्ड बदल दिये जायें और गवर्नर-जनरल के अलावा और किसी को अधिकार सौंपे जायें, हमने यह सुझाव रखा है कि विधान-परिषद् के नियमों में इस प्रकार से संशोधन किया जाये कि जिससे कि अध्यक्ष को यह अधिकार मिल जाये। यह कहना कि अध्यक्ष को भी तारीख नियत करने का अधिकार न हो और यह इतना महत्त्वपूर्ण है कि सभा इस अधिकार को किसी भी व्यक्ति को नहीं सौंप सकती है मेरी राय में सन्देहों का आवश्यकता से अधिक प्रदर्शन करना है। उन परिस्थितियों को समझते हुये जिनमें होकर हम गुजर रहे हैं, हमें ठीक कार्य करने के लिये अपने अफसरों पर, अपने अध्यक्ष पर निर्भर होना पड़ेगा। अध्यक्ष सदैव सभा के अधीन है। यद्यपि वह बड़ा मुखिया है, फिर भी जनतन्त्रात्मक सिद्धान्त के अंतर्गत वे इस सभा के मत के अधीन है। अतः यदि वे कुछ त्रुटि करते हैं तो आप उन्हें सुधार सकते हैं, परन्तु प्रबन्ध-सम्बन्धी कार्यों के लिये आपको एक प्रबन्धक चाहिये। कुछ ऐसी बातें हैं जिनको प्रजातंत्र भी प्रबन्ध-समिति को सौंप देता है और यह उनमें से एक कार्य है, अर्थात् व्यवस्थापिका का बुलाना जिसको अध्यक्ष को देना चाहा है। हम सदैव आदेश देते हैं। प्रबन्ध-समिति उनको पूर्ण करती है। उदाहरण के रूप में, गत अधिवेशन के लिये तारीखें नियत नहीं की गई थीं। गत अधिवेशन उस तारीख को बुलाया गया था जिसको अध्यक्ष ने उपयुक्त समझा और उस पर किसी ने आपत्ति नहीं की। अभी तक अध्यक्ष ने अपने विवेक को गलत तरीके से काम में नहीं लिया है। ये सब मानवी अंग हैं। हम नियम तथा व्यवस्था या सिद्धान्त के वशवर्ती न हों। हम मनुष्य बने रहें और इसी दृष्टिकोण से विषयों पर विचार करें तथा जहां विश्वास आवश्यक है वहां विश्वास करें और जहां आपको अविश्वास करना चाहिये वहां अविश्वास करें। अन्यथा कार्य नहीं चल सकता। मैं इसलिये निवेदन करता हूं कि श्री मुन्शी का संशोधन स्वीकार किया जाये।

श्री आर.वी. धुलेकर (संयुक्त प्रांतः जनरल): सभापति जी, जो रिपोर्ट पेश की गई है, उसके समर्थन में मैं खड़ा हुआ हूं। जहां तक कि इसमें सिद्धांत दिये हुए हैं, वह बहुत उचित हैं और उनमें किसी को कोई उज्र नहीं हो सकता है। दो चार बातें इसके सम्बंध में मैं कहना चाहता हूं और वे इस प्रकार हैं। पहली बात यह है कि जब पहली धारा में यह बात कही गई है कि हमारी विधान-परिषद् को तब तक कार्य करते रहना चाहिये जब तक कि पूरा विधान न बन जाये और उसके बाद तब तक काम करते रहना चाहिये जब तक कि नई लोक-परिषद्

और राज्य-परिषद् दोनों न बन जायें, इसमें किसी को मतभेद हो सकता है। इसके सम्बंध में मैं केवल एक बात कहना चाहता था कि यह शब्द डोमिनियन लेजिस्लेचर जो बराबर हमारे होठों में आता है, यदि इसके बजाये हम इसे केवल इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट में ही सीमित कर दें तो अच्छा हो क्योंकि डोमिनियन शब्द कान में कुछ अच्छा नहीं लगता है, यह कटु मालूम होता है। सन् 1929 में डोमिनियन स्टेटस की बहुत चर्चा हुई थी और उसके विरुद्ध पूर्ण स्वराज्य (कम्पलीट इंडिपेंडेंस) के लिए हम लोगों ने प्रस्ताव पास किया था। डोमिनियन स्टेटस यद्यपि कुछ लोगों को बहुत अच्छा लगता था, परन्तु यदि उसका हिंदी भाषा में तर्जुमा किया जाये तो डोमिनियन स्टेटस का अर्थ दासता का स्थान है, या अगर फारसी या उर्दू में किया जाये तो हम उसको ओहदये गुलामी कहेंगे। इसलिए मेरी सूचना यह है कि किसी उचित अवसर पर या तो ड्राफ्टिंग कमेटी या हमारी असेम्बली या प्रेसीडेंट इसको अगर इंडियन पार्लियामेंट या पार्लियामेंट आफ इंडिया ऐसा शब्द अगर रख दें तो बहुत अच्छा होगा इसके बाद एक प्रश्न और भी है जिसके सम्बंध में कुछ लोगों के दिल में भ्रम है। जो सज्जन देशी राज्यों से आये हैं, उनके क्या अधिकार हैं? हमारे बाकी भारत में हमारी समस्याओं पर गौर करें, उन पर विचार करें और उसके साथ साथ वोट भी दें। मेरा इनसे यह कहना है कि यह भ्रम उचित नहीं है। हमको अब पूरा भारत एक समझना चाहिये, और प्रत्येक मनुष्य को जो यहां बैठे, प्रत्येक मेम्बर जो यहां पर बैठे, उसको पूरा आदरयुक्त स्थान यहां पर मिलना चाहिये। यदि हम उससे यह कहें कि आप थोड़ी देर तक बात कर सकते हैं और जब निश्चित रूप से अपनी राय देने के लिए अवसर आये—और निश्चित रूप से राय देने का मौका तभी आता है जब कि उसको हाथ उठाना पड़ता है, समर्थन में, या विरोध में—तो उस समय हम उससे कहें कि तुमको वोट देने का हक नहीं होगा और मताधिकार नहीं दिया जायेगा। मैं समझता हूं कि यह उचित नहीं है। दूसरी बात मैं यह भी कहना चाहता हूं कि जो सज्जन यह समझते हैं कि देशी राज्यों के प्रतिनिधि जो राजाओं द्वारा चुनकर आते हैं, और क्योंकि देशी राज्य पिछड़े हुए हैं इसलिए उनको पूर्ण मताधिकार नहीं मिलना चाहिये, तो मेरा उनसे यह भी निवेदन है कि आप देखते हैं कि हमारे प्रांत में कुछ प्रांत बहुत पिछड़े हुए हैं और कुछ प्रांत बहुत आगे हैं। कुछ प्रांतों में ऐसे नियम और कानून बन गये हैं जो कि लोक रूप में और लोक-नीति से बहुत अच्छे हो गये हैं। मजदूरों के लिए, किसानों के लिए और लोगों के लिए बहुत अच्छे-अच्छे कानून बन गये हैं। हमारे युक्तप्रांत में गांव हुकूमत बिल, प्रजातंत्र राज्य बिल, असेम्बली में पास हो चुका है और अब वह अपर चेम्बर में, कौंसिल में

[श्री आर.वी. धुलेकर]

भी जायेगा। ऐसा बिल अभी तब दूसरे प्रांतों में पास नहीं हुआ है, तो इसलिए जब कि हमारा प्रांत आगे भी है तो ऐसी बात कहना कि चूंकि देशी राज्य पिछड़े हुये हैं इसलिए देशी राज्यों के लोगों को यहां पर स्थान न मिलना चाहिये, यह उचित नहीं है। कुछ लोग ऐसा भी कहते हैं कि आप ऐसा करें कि जो सज्जन देशी राज्यों की प्रजा द्वारा चुनकर भेजे गये हैं, उनको तो अवसर दें, किंतु जो चुने हुए नहीं आये हैं बल्कि राजाओं द्वारा नोमिनेटेड मेम्बर्ज हैं, उनको इसका अवसर नहीं दें। मेरा कहना यह है कि उन को भी पूरा स्थान मिलना चाहिये और पूरा अधिकार मिलना चाहिये कि जिससे वे यहां पर पूरा स्थान प्राप्त कर लें। डेमोक्रेसी, प्रजातंत्र क्या होता है, लेजिस्लेटिव असेम्बली में किस तरह से कार्यवाही होती है और जो एक सामूहिक बुद्धिमत्ता है, वह कितनी अधिक इसमें होती है, यह भी उनको अगर स्पष्ट रूप से देखने को मिल जाये तो मैं समझता हूं कि वह बहुत जल्द अपने देशी राज्यों में जाकर इस बात का प्रयत्न करेंगे कि प्रजातंत्र को वहां पर बढ़ायें। इसलिए मैं समझता हूं कि यह आक्षेप कि जो देशी राज्यों के नियोजित सदस्य हैं, उनको पूर्ण अधिकार नहीं मिलना चाहिये, यह भी उचित नहीं है मैं समझता हूं कि प्रजातंत्र के आगे एक कदम बढ़ाने के लिए यह बड़ा भारी कार्य है जिस कार्य को हमारे डा. अंबेडकर साहब ने और उनके साथियों ने पूर्ण किया है, और मैं उनको बहुत धन्यवाद देता हूं। एक प्रश्न और भी है कि हम लेजिस्लेटिव असेम्बली के लिए कानून बनाने वाली लोक-परिषद् के लिए एक स्पीकर नियत करने जा रहे हैं। यह योजना बहुत अच्छी है। गवर्नर-जनरल को तो मैं पसंद नहीं करता, इस बात से कि एक तो वह विदेशी है और दूसरे गवर्नर-जनरल का शब्द भी कुछ ऐसा अच्छा नहीं है जो कान को अच्छा लगे इसलिए उनको यह अधिकार नहीं होना चाहिये कि वह असेम्बली को बुलायें या असेम्बली को मुल्तवी कर दें। अब रह गया सवाल कि—प्रेसीडेंट या स्पीकर किसको असेम्बली बुलाने या मुल्तबी करने का अधिकार हो। तो मेरी राय में कम से कम जब यह बात कही गई थी कि चूंकि प्रेसीडेंट महोदय मिनिस्टर हैं, इसलिए स्पीकर वह न हों, तो मेरी तो यह राय थी कि यदि ऐसी बात है कि जब आपने स्पीकर बनाया है तो स्पीकर को ही अधिकार दे दिया जाये कि वह लेजिस्लेटिव असेम्बली को बुलाये या मुल्तवी कर दे। क्योंकि, जो बहस पहली बात में लगती है, वही दूसरी बात में भी लगती है। अगर मिनिस्टर को इतना अधिकार नहीं होना चाहिये कि वह हमारा प्रेसीडेंट बनकर लेजिस्लेटिव असेम्बली में बैठे, तो यह बहस वहां पर भी लागू हो सकती है। किंतु हमारे मेम्बरों ने यह भी कहा कि हम लोगों को बहुत कांस्टीट्यूशन बातों में और उसके प्रोवीजनों में नहीं जाना चाहिये तो मैंने भी उसे मान लिया कि कोई हर्ज नहीं है। अब रह गई यह बात कि एक प्रश्न यहां पर

उठा है कि दोहरी सदस्यता, यानी डबल मेंबरशिप, को उपस्थित किया गया। कुछ सज्जनों का शायद ऐसा कहना था कि यहां पर प्रांतीय असेम्बलियों के जो सदस्य आये हुए हैं। उसकी वजह से प्रांत में कार्य बहुत ढीला पड़ जायेगा। और कार्यवाही पूर्णरूपेण नहीं हो सकेगी। इसलिए दोहरी सदस्यता बंद कर देनी चाहिये। इसके सम्बंध में यह भी कहा गया है कि कान्स्टीट्यूशन असेम्बली को, अर्थात् इस विधान-परिषद् को, सोचना चाहिये कि दोहरी सदस्यता रखी जाये या नहीं। मेरा नम्र निवेदन है कि विधान-परिषद् का इस प्रश्न से कोई सम्बंध नहीं है। प्रांतीय असेम्बलियों को अधिकार है कि वह अपने चुने हुए सदस्य कांस्टीट्यूएंट असेम्बली में भेजें और जिन पर उनको पूर्ण विश्वास था उन्होंने उनको भेजा और यहां पर वे कार्य कर रहे हैं। मेरी सम्मति यह है कि जब हमने विधान-परिषद् में आरम्भ से कार्य किया है तो इस समय हमारा यह ध्येय होना चाहिये कि कांस्टीट्युऐंट असेम्बली में अर्थात् विधान-परिषद् में ऐसा परिवर्तन नहीं होना चाहिये जिससे कि आज तक जितना काम हमने किया है उस काम को आगे आने वाले लोग न जान सकें। मैं इस बात को मानता हूं कि तमाम प्रांतों से प्रमुख-प्रमुख लोग यहां पर आये हैं और लोग यह थोड़ा-बहुत कह सकते हैं कि कदाचित-प्रांतो की उसमें हानि हो, लेकिन मेरा कहना यह है कि यह युक्ति बहुत ही मजबूत है इस बात के लिए कि चूंकि प्रमुख-प्रमुख लोग समस्त प्रांतों से आये हैं और वे ज्यादा से ज्यादा जिम्मेदार लोग थे जिनको कि प्रांतों ने यहां चुन कर भेजा है, इसलिए यह बहस बहुत ही मजबूत है। इस बात के लिए कि दोहरी सदस्यता तब तक कायम रखी जाये जब तक अंत में नये चुनाव होकर नई लेजिस्लेटिव असेम्बली कायम न हो जाये। इसलिए मेरा नम्र निवेदन है कि इस प्रश्न को यहां पर अधिक महत्व नहीं देना चाहिये। अब केवल एक बात कह कर खत्म करूंगा और वह यह है कि जो हमारा विधान चल रहा है उसमें कुछ ऐसी बातें हैं कि जिन पर हमारी विधान-परिषद् ने अभी तक विचार नहीं किया है। मेरी सम्मति है कि कांस्टीट्यूएंट असेम्बली और विधान-परिषद् को कम से कम एक जल्सा अवश्य उस लेजिस्लेटिव असेम्बली के पहले बुलाना चाहिये, जिसमें हम पूरे कानून पर विचार करेंगे और इसलिए मैं निवेदन करूंगा कि डोमिनियन लेजिस्लेचर के रूप में बैठने से पहले इस विधान-परिषद् का एक इजलास हो जाना चाहिये, जिसमें जितनी अपूर्ण बातें हैं, जिन पर कि विचार नहीं किया गया है, उन पर भी विचार कर लें। और जिस कमेटी को विधान तैयार करने के लिए हमने मुकर्रर किया है, उसके सामने अपनी सामूहिक राय समस्त बातों के लिए पहुंच जाये, ताकि वह अच्छा कांस्टीट्यूशन का ड्राफ्ट बना सकें। इतना कहकर मैं समाप्त करता हूं।

***अध्यक्षः** अब मि. तजम्मुल हुसैन बोल सकते हैं। मैं उनसे संक्षेप में बोलने के लिए निवेदन करूंगा। मैं एक बजे वाद-विवाद समाप्त करना चाहता हूं।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** श्रीमान् जी, मैं संक्षेप में बोलूंगा। हमारे सामने यह प्रश्न है कि इस विधान-परिषद् का किस प्रकार निर्माण हुआ? क्या यह पार्लियामेंट के एक्ट द्वारा बनी या अन्य किसी प्रकार से? श्रीमान् जी, यह किसी व्यवस्था या कानून द्वारा नहीं बनी। इसकी उत्पत्ति 16 अप्रैल की घोषणा द्वारा हुई। उसके पश्चात् इसने अधिकार ग्रहण किये और समस्त भारत के लिए यह सर्वोच्च संस्था हुई। इस प्रकार इसकी उत्पत्ति हुई और वह अपना जीवन बिता रही है। हम जानते हैं कि विधान बनाने वाली संस्था के रूप में विधान-परिषद् तथा व्यवस्थापिका-संस्था के रूप में विधान-परिषद् में कोई अंतर नहीं है। दोनों पूर्णतया एक ही हैं। कोई अंतर नहीं है। इस विधान परिषद् को बुलाया गया है। अब यह सुझाव रखना कि गवर्नर-जनरल अपने मार्ग से विचलित हों और हमें फिर बुलायें, निरर्थक है। मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार आप यहां अध्यक्ष के नाते हमें विधान-परिषद् के सदस्यों के रूप में भारत के लिए विधान बनाने या देश के दिन प्रतिदिन के शासन सम्बंधी कानून बनाने के लिए बुला सकते हैं।

श्रीमान् जी, एक प्रश्न उठाया गया है कि जब हम व्यवस्थापिका के रूप में बैठें तो अन्य अध्यक्ष तथा अन्य स्पीकर होना चाहिये। मेरे विचार से विधान-परिषद् का अध्यक्ष व्यवस्थापिका के अध्यक्ष या स्पीकर के रूप में कार्य कर सकते हैं। पर कठिनाई केवल यह है कि दुर्भाग्य अथवा सौभाग्य से आप सरकार के भी सदस्य हैं। अतः यह सुझाव रखा गया है कि आपका उस आसन पर बैठना ठीक तथा उचित नहीं होगा, क्योंकि आपके अधिकार के विभागों के सम्बंध में अनेकों प्रश्न पूछे जायेंगे और आपके लिए यह कठिनाई होगी कि आप उनका उत्तर सरकार के सदस्य के रूप में दें अथवा स्पीकर के रूप में। आपको हमने यह अधिकार सौंप दिये हैं कि आप अपने अधिकारों को अन्य किसी को दे दें। आप हम लोगों में से किसी को डिप्टी स्पीकर या अन्य कोई कार्यकर्त्ता, आपका कार्य करने के लिए नियुक्त कर सकते हैं। उदाहरण के रूप में, मैं आपको एक मिसाल दूंगा। बिहार में श्री सच्चिदानन्द सिनहा (जो कि परिषद् के भी सदस्य हैं) कौंसिल के अध्यक्ष के और साथ ही साथ सरकारी राज्य-परिषद् के सदस्य थे। वे एक ही समय दोनों कार्य करते थे। श्रीमान् जी, यदि ऐसी बातें ब्रिटिश राज्य में हो सकती थीं तो हमारे राज्य में क्यों नहीं हो सकती हैं? अतः मैं निवेदन करता हूं कि भिन्न-भिन्न रूप में हमें फिर बुलाने की गवर्नर-जनरल को कोई आवश्यकता नहीं है। हमारी उत्पत्ति हो चुकी है और हम कार्य कर रहे हैं और जिस समय आप चाहें सभा बुलाई जा सकती है। जब आवश्यकता हो, आप आसन छोड़ सकते हैं और अपने काम के लिए एक डिप्टी स्पीकर नियुक्त कर सकते हैं।

श्री हीरालाल शास्त्री (जयपुर): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र डाक्टर देशमुख ने और श्री धुलेकर ने मुझे प्रेरणा दी है कि मैं भी अपना नम्र निवेदन आपके सामने उपस्थित करूं। कुछ ने कहा कि विधान और कानून के हिसाब से देशी रियासतों के प्रतिनिधियों को यहां पर बराबर के अधिकार दिये जाने ठीक नहीं हैं, दूसरे साहब ने फर्माया कि यद्यपि देशी रियासतों के लोग पिछड़े हुए हैं, तब भी अच्छा होगा उनकी ध्वनि या कहने की शक्ति कम हो तब भी उन्हें पूरा हिस्सा लेने देना चाहिये।

मैं इस विधान-परिषद् की बहुत बड़ी इज्जत करता हूं और मैं अपनी इज्जत मानता हूं कि मुझे इस परिषद् का सदस्य चुने जाने का अवसर मिला है। परन्तु यह कहे बिना मैं नहीं रह सकता कि विचित्र परिस्थितियों में इस परिषद् का निमंत्रण हुआ है, और इस परिषद् में विभिन्न रंग के लोग शामिल हैं। कितने ही लोग ऐसे हैं जो प्रान्तों कि व्यवस्थापिका द्वारा चुने हुये आये हैं और कितने लोग देशी रियासतों से आये हैं। देशी रियासतों से आने वाले जो लोग हैं, उनमें भी विभिन्न रंग के लोग हैं। कुछ ऐसे हैं, जिन्हें राजाओं ने नामजद किया है। कुछ ऐसे हैं, जिन्होंने अपने आपको नामजद कर लिया है। कुछ ऐसे हैं जो चुने हुये कहे जाते हैं। लेकिन वास्तव में उनके चुने हुये में शंका की जा सकती है। कुछ ऐसे हैं, कम से कम जो स्वयं राजा हैं, चाहे छोटे ही हों, एक कम से कम ऐसे हैं जो राजकुमार हैं। कुछ ऐसे हैं, जिन्हें हम उपराजा कहना पसंद करें। इसी प्रकार तरह-तरह के लोग यहां पर आये हैं, या परिस्थितियों का दबाव था और हमको झिझकते-झिझकते बुलाया गया। और हम भी कितनी अड़चनों के बाद आते-आते आखिरकार पहुंच गये। मैं इन बातों को दोहराऊंगा नहीं। आप सब उन बातों को जानते हैं, लेकिन आज आकर के हम प्रान्तों के प्रतिनिधियों के साथ बराबर की पंक्ति में यहां पर आकर बैठ गये। यह तो आप नहीं ख्याल करेंगे कि हम कोई भिखारियों की हैसियत रखते हैं, या कानून और विधान के खिलाफ हमको भीख मांगनी है। एक समय था कि जब यहां पर देश की आजादी की लड़ाई लड़ी जा रही थी। उस लड़ाई में देशी रियासतों की जनता ने बिना किसी निमंत्रण के भी हिस्सा लिया और मैदान में कन्धे से कन्धा लगा कर आपके साथ जूझे। उसमें निमंत्रण की आवश्यकता नहीं थी। आज तो हम बिना निमंत्रण के नहीं आ गये हैं। किसी न किसी प्रकार के निमंत्रण से हम यहां पर आये हैं। और इस पंक्ति में आज हम मौजूद हैं। अब पंक्ति में आकर बैठने के बाद जब नाना प्रकार के व्यंजन के परोसने की बात यहां पर है (यह विषय, वह विषय, वह विषय)।

[श्री हीरालाल शास्त्री]

अब हमसे कह दिया जायेगा की भैया तीन पदार्थ तुम खा सकते हो और वस्तु तुम्हारे पथ्य के विरुद्ध है, उसे न छूना। यह कहा जा सकता है, लेकिन आज यह कहने का कष्ट नहीं करना चाहिए। आप हम पर अब यह भरोसा कर सकते हैं कि कदाचित् जो हमारे लिये पथ्य नहीं होगा उससे हम स्वयं दूर रहेंगे। इसमें हम स्वयं हिस्सा न लें यह मुनासिब हो सकता है, लेकिन अगर ऐसा ख्याल है तो मुझे आपसे कुछ मांगना नहीं है। इस बारे में हमारे किसी हक से वह हक कम माने गये, यह हमारी बदकिस्मती है, लेकिन हम किसी हक से यहां मौजूद हैं तो मुनासिब यह होगा कि जो भी लोग यहां आ गये हैं, चाहे वे राजा हों, चाहे राजकुमार हों, चाहे उपराजा हों, चाहे नामजद किये हुये प्रधान मंत्री हों, चाहे खुद के नामजद किये हों, चाहे यहां वे लोग हों, जो 60 में से 20 के करीब होंगे। यहां पर बैठने वाले अधिकतर लोग बराबर हैं, किसी प्रकार पिछड़े हुये नहीं, बल्कि आगे बढ़ रहे हैं, कुछ कर सकने वाले, कुछ कर चुकने वाले, कुछ कर दिखलाने वाले, ऐसे भी लोग हैं। लेकिन बिना किसी भेदभाव के, बिना किसी प्रकार पंक्ति बाधा के, बिना किसी जाति-भेद के, मैं समझता हूं कि सब आ गये हैं और उनके अधिकार समान होने चाहिएं।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से इस पर यथेष्ट वाद-विवाद हो चुका है। मैं अब डाक्टर अम्बेडकर को उत्तर देने के लिये बुलाऊंगा।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** अध्यक्ष महोदय, कमेटी द्वारा दी गई रिपोर्ट का मिश्रित भावना के साथ स्वागत किया गया है। सभा के कुछ सदस्यों ने उसको गड़बड़ी का लेख कहा है। जिन्होंने इन शब्दों में रिपोर्ट की व्याख्या की है उनको मैं कुछ भी उत्तर नहीं देना चाहता हूं, क्योंकि मैं स्वयं समझता हूं कि उन्होंने जो तर्क प्रस्तुत किया है वह यथेष्ट विचार करने योग्य नहीं है। उत्तर में मैं जो कुछ निवेदन करना चाहता हूं वह मेरे मित्र डा. देशमुख तथा श्री विश्वनाथ दास द्वारा उठाये गये कुछ प्रश्नों के सम्बंध में है। डा. देशमुख कमेटी द्वारा की गई दो सिफारिशों का हवाला देते हैं। एक रियासत के प्रतिनिधियों को परिषद् के समस्त विचार-विमर्शों में भाग लेने की आज्ञा देने के सम्बन्ध की सिफारिश थी। दूसरी सिफारिश जिसका उन्होंने हवाला दिया था, वह राज्य के मन्त्रियों के सम्बन्ध में थी, जिनके लिये कमेटी ने यह कहा कि विधान-परिषद् की कार्यवाहियों में भी भाग लेने की उन्हें इजाजत देना वांछनीय नहीं होगा। डा. देशमुख ने कहा कि जो कुछ कमेटी ने किया वह तर्कसम्मत अथवा उपयुक्त था। कमेटी ने यह नहीं

कहा कि वह वैधानिक भी था। मुझे इस प्रश्न पर बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि डा. देशमुख वकील हैं। सच तो यह है कि उनको यह अनुभव कर लेना चाहिये था कि हमारा अभी कोई विधान नहीं है। विधान-परिषद् विधान बना रही है। और जो कुछ विधान-परिषद् करेगी वह वैधानिक होगा। (*वाह, वाह*) यदि विधान-परिषद् यह कहे कि रियासत के प्रतिनिधि भाग न लें तो वह ठीक वैधानिक होगा। यदि विधान-परिषद् यह कहे कि वह भाग लें तो वह भी ठीक वैधानिक होगा। अत: ऐसा कहना पूर्णतया भ्रमात्मक है।

मेरे मित्र श्री विश्वनाथ दास ने जो प्रश्न उठाया है उसके सम्बन्ध में भी मुझे काफी आश्चर्य हुआ कि जो कुछ उन्होंने कहा उस पर उन्होंने ठीक विचार नहीं किया। जो कुछ उन्होंने कहा, यदि वह मुझे ठीक-ठीक याद है तो उनकी बातें दो विषयों पर थीं। उन्होंने कहा, कि कमेटी परिषद् को दो भागों में बांट रही है और परिषद् अविभाज्य संस्था है और वह एक रूप में कार्य कर रही है। मैं नहीं समझता कि वे इस बात को समझ भी सकते हैं या नहीं कि विधान बनाना साधारण कानून बनाने से बिल्कुल भिन्न कार्य है। इस अन्तर को यदि मैं संक्षेप में कहूं तो इस प्रकार है कि विधान-परिषद् विधान के बन्धन में नहीं है, परन्तु व्यवस्थापिका विधान के बन्धन में है। जब विधान-परिषद् व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करेगी तो स्वतन्त्रता एक्ट के अन्तर्गत जो कि भारत सरकार के एक्ट का संशोधित रूप है, उसे कार्य करना होगा। प्रत्येक व्यक्ति वैधानिक आपत्ति उठा सकेगा। प्रत्येक व्यक्ति यह कह सकेगा कि कोई विशेष प्रस्ताव कानून के अन्तर्गत है या बाहर। परन्तु, ऐसा प्रश्न उठ ही नहीं सकता जब कि विधान-परिषद् विधान बनाने वाली संस्था के रूप में कार्य कर रही है। मैंने सोचा कि इतना वास्तविक भेद-विभेद हमको यह समझने में कि ये दो कार्य भिन्न-भिन्न हैं कि उद्देश्य भिन्न-भिन्न हैं और कार्य भिन्न हैं, यथेष्ट रूप से सहायक होगा। यदि हम गड़बड़ी दूर करना चाहते हैं तो इस कार्य का क्रियात्मक रूप यही होगा कि विधान-परिषद् को व्यवस्थापिका से अलग अधिवेशन करने दें। उन्होंने संशोधनों के प्रति भी कुछ आपत्ति की। मैं यह स्पष्ट कहता हूं कि यहां का कोई भी व्यक्ति भारत सरकार के 1935 के एक्ट में किये गये संशोधनों का जिम्मेवार नहीं है। यदि वे भारतीय स्वतंत्रता बिल की धारा 8 के उपवाक्य खण्ड (1) को देखें तो उनको यह विदित होगा कि विधान-परिषद् की व्यवस्थापिका के रूप में जो स्थिति है उसके अनुरूप भारत सरकार के 1935 के एक्ट में संशोधन करने का अधिकार पूर्णतया गवर्नर-जनरल को सौंपा गया है। मेरे विचार से यह सम्भव हो सकता है कि यह निर्णय करने के लिये कि क्या संशोधन किये जायें, गवर्नर-जनरल ने किसी केन्द्र

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

से राय ली हो। अतः इस वर्तमान समय में इसका कोई जिम्मेवार नहीं है। भारत-सरकार के एक्ट में किये गये संशोधनों से यदि विधान-परिषद् संतुष्ट नहीं है तो वही धारा (8) उप-वाक्यखण्ड (1) कहता है कि विधान-परिषद् को यह पूर्ण अधिकार है कि वह अपनी इच्छानुकूल संशोधनों में परिवर्तन कर ले। अतः मैं निवेदन करता हूं कि कमेटी के समालोचकों ने जो प्रश्न उठाये हैं, उनमें कोई सार नहीं है।

एक और प्रश्न है, जिसका मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी ने उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि श्री मुन्शी के प्रस्ताव में रिपोर्ट के दूसरे भाग को छोड़ दिया गया है, जो इस बात से सम्बन्धित है कि अध्यक्ष ही विचार-विमर्श तथा शासन-व्यवस्था दोनों का एकमात्र अधिकारी है। उन्होंने यह प्रश्न किया कि श्री मुन्शी ने जो प्रस्ताव बनाया तथा हमारे सामने रखा और जो कि लगभग कमेटी के समस्त प्रस्तावों को स्वीकार करता है उसमें यह विशेष व्यवस्था क्यों नहीं है? मैं यह कहना चाहूंगा कि यदि श्री कृष्णमाचारी ध्यानपूर्वक रिपोर्ट को पढ़ें तो उनको यह विदित होगा कि कमेटी की ओर से रिपोर्ट का वह विशेष भाग निरीक्षण के रूप में है, न कि सिफारिश के रूप में। अतः मैं निवेदन करता हूं कि उसका उल्लेख न करने में श्री मुन्शी बिल्कुल ठीक हैं।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्रः** श्रीमान् जी, मैं डा. अम्बेडकर से कुछ सूचना प्राप्त करना चाहता हूं। सर्वप्रथम तो मैं उनसे यह जानना चाहूंगा कि उनको यह विश्वास है या नहीं कि पुनः संशोधन करने की आवश्यकता है, और यदि उनका ऐसा विश्वास है तो विधान-परिषद् के अगले अधिवेशन में या इससे जल्दी किसी तारीख को कुछ विषयों के सम्बन्ध में नये संशोधन रखने का विचार है क्या? उदाहरण के रूप में, भारत सरकार के एक्ट से स्पीकर को हटाना और इस सिफारिश में यहां उसको रखना। और भी अनेकों विषय हैं जैसे मंत्रियों का, जो कि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं परन्तु उनका सदस्य होना आवश्यक है। ऐसे भागों के लिये संशोधन करने का क्या कोई अन्य साधन विचारा गया है?

दूसरी बात, यदि मैंने उनको ठीक-ठीक समझा तो उन्होंने अपने भाषण में इस बात का हवाला दिया था कि जो विभाग स्थापित किया जा रहा है उसके शासन-नियंत्रण के प्रश्न को उन्होंने नहीं लिया है और यह कहा कि वह विचारणीय विषय से बाहर था। हमारे मन में कुछ शंकायें हैं कि इस विभाग के लिये, जबकि वह व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे, एक और स्वतंत्र रचना (कार्यालय) स्थापित करने में संघर्ष होने की सम्भावना है।

तीसरा प्रश्न यह है कि श्री मुन्शी द्वारा प्रेषित प्रस्ताव में जो बातें रखी गई हैं, क्या वे उस समय के लिये अस्थायी रूप से हैं या नहीं जब तक कि हम दोहरे विधान बनाने वाली तथा व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करें?

***एक माननीय सदस्यः** क्या यह भाषण है या प्रश्न?

***अध्यक्षः** मैं पण्डित मैत्र को यह स्मरण दिलाऊंगा कि वह भाषण नहीं दे सकते हैं। उन्होंने प्रश्न रख दिया है और यदि चाहें तो डा. अम्बेडकर उत्तर दें।

***एक माननीय सदस्यः** प्रश्न भी अवैधानिक है।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्रः** वह क्यों नहीं रखा जा सकता? जब माननीय सदस्य वाद-विवाद का उत्तर देता है और कोई अन्य माननीय सदस्य उसको नहीं समझ पाता तो उन बातों को स्पष्ट करने के लिये प्रश्न पूछने का उसे उचित अधिकार है।

***अध्यक्षः** आपने प्रश्न रख दिया है, डा. अम्बेडकर उत्तर देंगे।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं संक्षेप में कहूंगा। प्रथम प्रश्न यह है कि भारत सरकार के एक्ट में हम कोई परिवर्तन करने का विचार करते हैं या नहीं? मेरा उत्तर यह है कि यह सभा के निर्णय करने का प्रश्न है कि सभा क्या संशोधन चाहती है। परन्तु मैं अपने मित्र को यहां यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि हमको संशोधनों में परिवर्तन करने का अधिकार है। भारत सरकार का एक्ट अपने संशोधनों सहित हमारे ऊपर इस रूप में पूर्णतया लागू नहीं होता कि परिवर्तन करना हमारी सामर्थ्य के परे है। यदि विषय पर पुनः विचार करने के पश्चात् सभा यह अनुभव करती है कि कुछ संशोधनों में परिवर्तन किया जाना चाहिये तो उस व्यवस्था को लेना बिल्कुल सम्भव होगा।

दूसरा प्रश्न जो मेरे माननीय मित्र श्री मैत्र ने मुझसे पूछा है वह यह है कि शासन-नियंत्रण की एकता पर प्रभाव पड़ने की कोई सम्भावना है तथा इस बात पर संघर्ष होने की सम्भावना है कि दो कार्यालय हों—एक विधान-परिषद् के अध्यक्ष का तथा दूसरा व्यवस्थापिका के स्पीकर का। कमेटी ने जो कुछ कहा है वह यह है कि सिद्धान्त रूप से ऐसे संघर्ष की सम्भावना है। परन्तु मैं मानता हूं कि संघर्ष होना आवश्यक नहीं है। अभ्यास में परिषद् के अध्यक्ष तथा स्पीकर सम्बन्धी दोनों कार्यालयों के लिये मिलकर कार्य करना सम्भव होगा तथा दो कार्यालयों के होते हुए विधान-परिषद् व व्यवस्थापिका का इस प्रकार ठीक-ठीक समय नियत

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

किया जा सकेगा कि किसी भी प्रकार के संघर्ष से डरने की कोई आवश्यकता नहीं।

तीसरे प्रश्न के सम्बन्ध में, यह प्रत्यक्ष है कि विधान-परिषद् को व्यवस्थापिका के रूप में परिवर्तन करना नि:संदेह अस्थायी होगा। वह जब तक रहेगा तब तक विधान-निर्माण-कार्य पूर्ण नहीं होता। जब वह पूर्ण हो जायेगा तो दोनों में से एक समाप्त हो जायेगी और इसके पश्चात् हम केवल व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करते रहेंगे।

***मि. नजीरुद्दीन अहमद:** एक प्रश्न और है। माननीय सदस्य ने कहा है कि सभा द्वारा पुन: संशोधन किया जा सकता है। क्या गवर्नर जनरल के लिये और आगे संशोधन करना सम्भव होगा?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** यह कानून का प्रश्न है। इस सभा को संशोधन में परिवर्तन करने का अधिकार है।

***मि. नजीरुद्दीन अहमद:** मैं यह अस्वीकार नहीं करता। प्रश्न यह है कि क्या माननीय सदस्य की यह राय है कि गवर्नर-जनरल और आगे संशोधन कर सकता है?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** वह नहीं कर सकता है, क्योंकि उसे अपने परामर्शदाताओं की राय पर चलना होगा।

***मि. नजीरुद्दीन अहमद:** मंत्रियों की सलाह से क्या हम ऐसा कर सकते हैं?

***एक माननीय सदस्य:** क्या यह न्यायालय है या जांच प्रश्न?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं ठीक-ठीक नहीं जानता और बिना जाने हुये उत्तर देना नहीं चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** जैसा कि सुझाया गया था, मेरे विचार से हमें एक-एक वाक्य-खण्ड को रख कर प्रस्ताव पर मत लेना है:

वाक्यखंड (1)

"(1) परिषद् का कर्तव्य होगा कि–

(क) विधान बनाने के कार्य को प्रचलित रखना तथा समाप्त करना जोकि 9 दिसम्बर सन् 1946 ई. को आरम्भ किया गया था।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः ''(ख) संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करना जब तक कि नये विधान के अनुसार व्यवस्थापिका न बने।''**

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः ''(2) विधान बनाने वाली संस्था के रूप में परिषद् के कार्य में तथा संघ-व्यवस्थापिका के रूप में उसके साधारण कार्य में स्पष्ट अन्तर रख देना चाहिये और इन दो प्रकार के कार्यों के लिए अलग-अलग दिन या एक दिन में अलग-अलग सभायें नियत की जायें।''**

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः ''(3) परिषद् में भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों की स्थिति के सम्बंध में रिपोर्ट के पैरा (6) में की गई सिफारिशों को स्वीकार किया जाये।''**

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः ''(4) परिषद् के विचार-विमर्शों पर, जबकि वह संघ व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे, अध्यक्ष का कार्य करने को, एक अफसर जिसको स्पीकर कहा जाये के निर्वाचन के लिए यह विधान-परिषद् अपने नियमों में उपयुक्त व्यवस्था बनाये।''**

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः ''(5) परिषद् को संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करने के लिए बुलाने तथा समाप्त करने का अधिकार अध्यक्ष को हो।''**

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः ''(6) संघ-सरकार के मंत्रियों को, जोकि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं, विधान-निर्माण-कार्य में उपस्थित होने तथा भाग लेने का अधिकार होगा, लेकिन जब तक कि वे विधान-परिषद् के सदस्य न हों उनको वोट देने का कोई अधिकार नहीं होगा।''**

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः ''(7) आवश्यक परिवर्तन, संशोधन तथा वृद्धि की जायें–**

(क) भारतीय व्यवस्थापिका की स्थायी आज्ञाओं तथा उसके नियमों में विधान-परिषद् द्वारा, उनको (आज्ञाओं तथा नियमों को) जिस रूप में भारत सरकार के एक्ट की प्रयुक्त व्यवस्थाओं को भारतीय स्वतंत्रता एक्ट 1947 के अन्तर्गत संशोधन कर ग्रहण किया है उसके अनुरूप बनाने के लिये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः ''(ख) विधान-परिषद् या अध्यक्ष द्वारा, जैसी भी सूरत हो, उन नियमों तथा स्थायी आज्ञाओं में पैरा 9 की व्यवस्थाओं का पालन करने के लिये और जहां आवश्यक हो भारतीय सरकार की प्रयुक्त धारा की नये नियम के अनुरूप बनाने के लिये उचित संशोधन करने के लिये।''**

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न है कि पूरे प्रस्ताव को स्वीकार किया जाये अर्थात्–

''1–भारतीय स्वतंत्रता एक्ट के अनुसार विधान-परिषद् के कार्यों की रिपोर्ट पर विचार करने के सम्बन्ध में माननीय डा. बी. आर. अम्बेडकर द्वारा प्रेषित प्रस्ताव के सिलसिले में यह निश्चय किया जाता है किः

(1) परिषद् का कर्तव्य होगा कि–

(क) विधान बनाने के कार्य को प्रचलित रखना तथा समाप्त करना जो कि 9 दिसम्बर सन् 1946 को आरम्भ किया गया था।

(ख) संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करना जब तक कि नये विधान के अनुसार व्यवस्थापिका न बने।

(2) विधान बनाने वाली संस्था के रूप में परिषद् के कार्य में तथा संघ-व्यवस्थापिका के रूप में उसके साधारण कार्य में के स्पष्ट

अन्तर रख देना चाहिये और इन दो प्रकार के कार्यों के लिये अलग-अलग दिन या एक दिन में अलग-अलग सभायें नियत की जायें।

(3) परिषद् में भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों की स्थिति के सम्बन्ध में रिपोर्ट के पैरा (6) में की गई सिफारिशों को स्वीकार किया जाये।

(4) परिषद् के विचार-विमर्शों पर, जब कि वह संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे, अध्यक्ष का कार्य करने को एक अफसर, जिसको स्पीकर कहा जाये, के निर्वाचन के लिये यह विधान-परिषद् अपने नियमों में उपयुक्त व्यवस्था बनाये।

(5) परिषद् को संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करने के लिये बुलाने तथा समाप्त करने का अधिकार अध्यक्ष को हो।

(6) संघ सरकार के मंत्रियों को, जो कि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं, विधान-निर्माण-कार्य में उपस्थित होने तथा भाग लेने का अधिकार होगा, लेकिन जब तक कि वे विधान-परिषद् के सदस्य न हों उनको वोट देने का कोई अधिकार नहीं होगा।

(7) आवश्यक परिवर्तन, संशोधन तथा वृद्धि की जायें–

(क) भारतीय व्यवस्थापिका की स्थायी आज्ञाओं तथा उसके नियमों में विधान-परिषद् के अध्यक्ष द्वारा, उनको (आज्ञायें तथा नियमों को) जिस रूप में भारत सरकार के एक्ट की प्रयुक्त व्यवस्थाओं को भारतीय स्वतंत्रता एक्ट 1947 के अन्तर्गत संशोधन कर ग्रहण किया है उसके अनुरूप बनाने के लिये।

(ख) विधान-परिषद् या अध्यक्ष द्वारा, जैसी भी सूरत हो, उन नियमों तथा स्थायी आज्ञाओं में पैरा 9 की व्यवस्थाओं का पालन करने के लिये और जहां आवश्यक हो भारतीय सरकार की प्रमुख धारा को नये नियम के अनुरूप बनाने के लिये, उचित संशोधन करने के लिये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अब यह प्रस्ताव स्वीकृत हो ही गया। मैं प्रस्ताव रखता हूं कि नियमों तथा स्थायी आज्ञाओं में संशोधन किया जाये तथा संशोधित भारत सरकार के एक्ट की उन धाराओं में भी, जिनमें आवश्यक समझा जाये, संशोधन किया जाये।

कर्मचारियों के बारे में वाद-विवाद के अन्तर्गत जो प्रश्न उठाया गया है, उसके लिये मैं एक समिति नियुक्त करने का प्रस्ताव रखता हूं, जिसमें विधान-परिषद् तथा व्यवस्थापिका सभा के कर्मचारी हों। वह दोनों विभागों के पुनः स्थापन की योजना तैयार करें, जिससे कि कार्य यथासम्भव अच्छा तथा कम खर्च में हो।

***श्री के.एम. मुन्शीः** क्या मैं यह संकेत कर सकता हूं कि परसों छुट्टी है और सदस्य इच्छुक हैं कि कल परिषद् समाप्त कर दी जाये? परसों हिन्दुओं का त्यौहार है और बहुत से सदस्य अपने घर जाना चाहते हैं।

***अध्यक्षः** यह सदस्यों के हाथ की बात है। मैं कल अधिवेशन समाप्त करने का प्रस्ताव रखता हूं।

तत्पश्चात् परिषद् शनिवार, 30 अगस्त, सन् 1947 ई. के प्रातः 10 बजे तक के लिये स्थगित हुई।